नानापा

प्रिये जन के जाने के बाद

शुभम कुमार दुबे

BlueRose ONE .com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Shubham Kumar Dubey 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7139-715-5

Cover Design: Shubham Verma
Typesetting: Sagar

First Edition: November 2025

(उन सभी प्रेम के नाम, जो समय से पहले चले गए
बिन बताए और हमारे भीतर एक बेचैनी छोड़ गए।)

ये आशा, निराशा और कथनी से भरी पंक्तियाँ, मेरे प्रिय नानू को समर्पित हैं।

सदैव,
आपका पुत्र

हम दुखों में मुस्कुरा देते हैं, अकेले होने के बाद कई तरह के ख्याल हमें जकड़ लेते हैं, कभी अत्यधिक सुख, दुःख, ईर्ष्या, ईश्वर से निराशा, झगड़ालू स्वभाव, आदि, हम इन्हीं भावों में फँस जाते हैं।

यह पुस्तक उन्हीं भावों को दर्शाती है, आगे आने वाली पंक्तियों में आपको कहीं भी यह नहीं दिखेगा कि भाव एक लय में बढ़ रहे हैं, बल्कि कभी भी कुछ भी सामने आ सकता है, वैसे ही जैसे ज़िंदगी होती है।

अनुशासन का न होना भी इस बात का आभास कराता है कि ज़िंदगी कट रही है, मगर उसमें कुछ कमी है। एक पल में सब अच्छा लगा,
अगले ही पल सब बिखरा सा महसूस हुआ।
एक पल ऐसा लगा कि सब समेट लेना है,
और फिर एहसास हुआ कि स्नेह पर भी ध्यान देना है।

ज़िंदगी कोई लिखित कहानी नहीं है।
इसमें विडंबनाएँ हैं, स्वार्थ है, और बहुत कुछ है।

प्रकरण

1.	पहला शोक	1
2.	मृत्यु के २ दिन बाद	2
3.	घर से दूर का ख्याल	3
4.	पुत्र वचन	4
5.	कुछ समय और	5
6.	स्नेह बंध	6
7.	आपके जाने के बाद	7
8.	एकांत से घर	8
9.	दफ़्तर में आया ख्याल	9
10.	पुत्र, पिता, बैर	10
11.	अंतिम मनो युद्ध	11
12.	छोटे शहर का बड़ा बेटा	13
13.	विधवा मनसा	14
14.	सुख कब?	15
15.	पराजय पे जीत	17
16.	छोटी पुत्री वचन	18
17.	वीरानापन	19
18.	प्रेम से बैर	20
19.	बैर से समझ	21
20.	पूर्ण विराम	22
21.	नियति का खेल	23
22.	चंचलता	24
23.	मंगल दूर नहीं	25
24.	मौन का समय	27

25.	यात्रा	29
26.	जीवनी	31
27.	यादों के मोती	32
28.	नसीब का मिला	34
29.	प्रेम के लिए	36
30.	समझ	37
31.	स्थिरता कब?	38
32.	समझ से समझौता	40
33.	घूमे मन में	42
34.	मांगना	43
35.	मोड़ के उस पार	45
36.	जवाब दे ज़िंदगी	46
37.	एक चिट्ठी आपके नाम	47
38.	ईश्वर मन में आए	50
39.	अगर-मगर हिसाब	51
40.	मिल के भी ना मिला	52
41.	मैं, अहंकार	53
42.	सौतन	55
43.	माँ और शहर	56
44.	एक अंतिम ज़िद्द	58
45.	फुर्सत का काम	60
46.	अदोषी	62
47.	कौन समझता है?	63
48.	खुशियाँ और ग़म	64
49.	व्याकुल प्रेम	65
50.	फिर बताऊंगा	66
51.	गले लग जा	68
52.	लल्ला की नींद	69
53.	तुम तक हूं मैं	71

54.	मानसिकता	72
55.	आहिस्ता हो जायेगा सब	74
56.	वीर बनो	76
57.	जीत की ओर	77
58.	लौट आओ	78
59.	तुम सा नहीं देखा	79
60.	मौत ज़िंदगी से बड़ी है क्या?	80
61.	यह बंदा	83
62.	अनबन ख्याल	84
63.	प्रेम हूँ मैं	86
64.	आराम करता	88
65.	कितना काफ़ी है?	89
66.	मैं बैठा रहा	91
67.	आदमी आदमखोर	93
68.	क्यूँ नहीं सुनता	95
69.	तू भी ठीक, मैं भी ठीक	96
70.	स्वीकार किया	98
71.	जेब में पड़ा ख़त	99
72.	नया तू	101
73.	अपना ख्याल रख	102
74.	परछाइयाँ	104
75.	कब आ रहे हो फिर?	106
76.	बेनाम	107
77.	तुम सब हो मेरे	108
78.	ठीक-ठाक रह लेता हूँ	109
79.	आराम करो	110
80.	आज़ादी से आज़ाद	111
81.	नवंबर	113
82.	अर्ज़ी पत्र	114

83. बड़ी बात 115
84. रंगों-प्यार गीत 116
85. इतवार-सोमवार खिचपिच! 118
86. बेहतर बनना 119
87. अंदर का कर्म 120
88. बीते नवंबर की कहानी 121
89. कर्ज़ के लोग 127
90. जाल से परे 128
91. चाह पे काबू 129
92. अंतिम चाहत 130
93. फ़िज़ूल की बात 134
94. फिर वही... 135
95. ज़रूरत का सुनो-समझो 136
96. अपना ही कातिल 139
97. चप्पल 140
98. सौदागर 142
99. मोल-भाव 144
100. खरीदारी 145
101. आपके लिए 147
102. आख़िरी अलविदा 148

पहला शोक

भोर अभी भी सताए,
एक दिन और मन पीड़ा जताए
आज भी तुम वही पिता के रूप में
मेरे पास खड़े नज़र आए।

कोई सिफ़ारिश हो तो बताओ
तुमको कैसे भूलूँ यह बताओ।

मेरे थे तुम
मेरे सब कुछ थे तुम
इस जहाँ की धूप में
छाँव मेरे थे तुम।

अब आना
तो पिता बन के आना
अंतिम यात्रा पे हक़ ले जाने का
मुझ को देना।

अब आना
तो पिता बन के आना
अगले जन्म में
मुझे फिर अपनाना।

तुम आना,
ज़रूर आना।

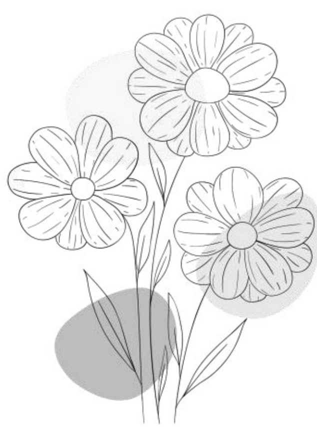

मृत्यु के २ दिन बाद

आँगन छोड़ उठे,
मन सफ़ेद भए।

सूनी खिड़की आँसू छल-छल पिए।
बड़ा मकान नीज, पराए गिद्ध आँख गड़ाए,
मोह में बसे, लज्जा तनिक न आए।

हड़प स्वप्न लिए, ईंट-ईंट कतराए,
अस्थि न बही, सब रंग लाल,
सफ़ेद चढ़ने आए।

सिसक-सिसक माँ रोए,
अंधा समाज चिंता जताए।

देवता-आदमी मौन धरे,
सब देख-देख पछताए।

देवता-आदमी परलोक सधाए।

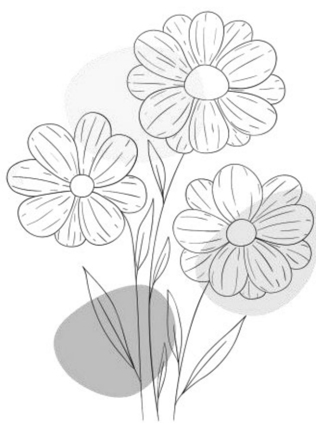

घर से दूर का ख्याल

रात हो गई,
खिड़की पे कोई लालटेन रखने आया नहीं।

सारा गाँव अब शहर जा चुका है,
गाँव को यह बताने कोई आया नहीं।

एक बार नौकरी आज़ादी दे,
तो घर वापस जाऊँ,
खुद से लालटेन खरीद,
घर के अँधेरे में,
रोशनी जलाऊं।

अपने सुनसान पड़े मकान को
फिर घर बनाऊँ,
शहर से दूर,
शांत शाम को महसूस कर
फिर कहानियाँ दोहराऊँ।

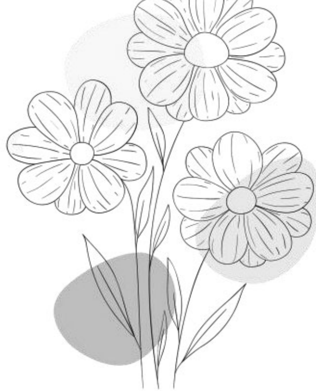

पुत्र वचन

जाने के बाद,
आपसे मिलने का बहुत मन करता है।

बहुत रह गया,
जो साथ जीने का मन करता है।

आप एक आवाज़ देते,
तो मैं आजाता आपको लेने।

वापस लाके सबसे मिलाता,
रो-रोकर आपको पिता बुलाता।

गले लगकर प्रेम जताता,
मैं आपको दोबारा नहीं जाने देता।

हाथ पकड़ के आपको अपने साथ रखता,
पिता मैं आपको जाने नहीं देता।

कुछ समय और

सिसक-सिसक बड़ा पुत्र रोए
घर पर आन पड़ी संकट
से घबराए।

माँ का सोचे, परिवार सताए।
बिना कुछ दिए कर्ज़ मांगने आएं।

ऊपर देख पिता छाती पिट-पिट रोए,
लड़का मेरा चंचल अब कष्ट उठाए।

वचनबद्ध, पुत्र सब झेल जाए,
पिता के ऊपर अभिमान लिए
सब कार्य जतन कर
दो पैसे घर लाए।

फिर भी कुटुंबी
कर्ज़ मांगने आएं,
आत्मा को सताए।

स्नेह बंध

दिवाली, छठ सब दूर हो गए,
मेरा कोई अपना अब मिल न पाए।

आख़िरी त्यौहार अब दुःख
की घड़ी बन जाए,
मेरा कोई अपना
अब त्यौहार में मिलने न आए।

स्वप्न भी क्या देखूँ,
हृदय चुप्पी लिए
सबसे दूर अश्रु बहाए।

अब त्यौहार भी दुःख देने आए,
हँसी लेकर, उदासी देने आए।

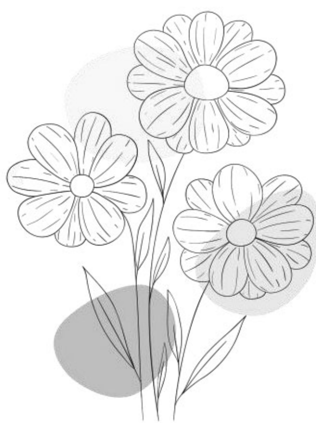

आपके जाने के बाद

घर की याद बंधी है स्नेह से,
रिश्तों के तार जुड़े हैं संस्कार से।

याद रह गई सांसों में,
मिलता हूँ मैं रोज़ आपसे
ख्यालों में।

वैकुण्ठ में बसे आप,
कभी तो आएं।

देखें परिवार,
कौन अपना, कौन पराए।

यह देख,
आपको कुछ समझ आए,
अधूरे हैं हम,
यह समय भी शोर मचाए।

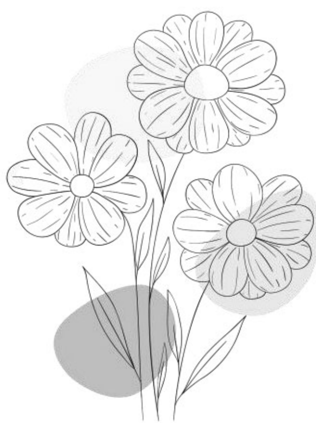

एकांत से घर

एक रोज़ पंछी शहर आ गया
फिर उसने चहकना छोड़ दिया।

फिर जब वो गाँव लौटा
तो चहकना भूल गया।

परिजन की याद में,
वो लड़का बड़ा हो गया,
पुरुष हो गया।

खेलते-कूदते बच्चे से,
घर का जिम्मेदार हो गया।

एकांत को समझ,
उसी में खुश हो गया,
लड़का जिम्मेदार हो गया।

दफ़्तर में आया ख्याल

जिया सोन में बसे
चहक मोरा मन शहरों में न लगे।

सूरज न सुबह देख पाए
मन भोर सा लगे।

आपकी याद में रहता है
शहर में बसा आपका पुत्र।

जो रोज़ लड़ता है
रातों से।

जागा रहता है आपकी
यादों में।

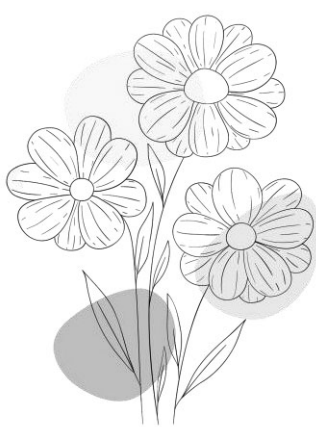

पुत्र, पिता, बैर

दिन से रात की
अब रात से भोर,
कुछ नहीं कहा
सुनने के इंतज़ार में,
तुम कुछ न बोले काम के भार से।

अंत: अब बात नहीं होती
सूरज आता है,
पर उठा नहीं जाता
शाम भी आती है,
मगर सोया नहीं जाता।

कहीं जाने का मन नहीं,
तुम अब पास आते भी नहीं।
लिखना अभी भी बहुत है,
पर अब दिल में चुभती बात,
लिखी जाती भी नहीं।

पुत्र खड़ा हुआ पैरों पे
तो पिता समझ आया,
पुत्र आज,
पिता जैसा होना चाहा।

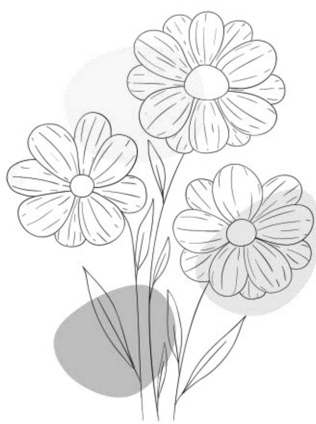

अंतिम मनो युद्ध

क्या है यह कथन
क्यों सोच में हताश है,
कुछ युद्ध में हार तो बात है।

आधे प्रेम की लालसा से क्यों डरता है,
मृत्यु ही तो सत्य है
क्यों नसों को उबाल से रोकता है।

उबाल आने दे,
ज़ोर आने दे
पीड़ा ग्रहण कर।

फिर रुक जा,
फिर उठ और सब हारा हुआ हार जा
और सब जीता, जीत जा।

अब मणिकर्णिका की आग में
कपाल को टूटने दे,
थोड़ा शोर आस-पास होने दे।

एक आख़िरी जलन में
जलकर राख हो जा।

सबसे रूठ के,
गंगा की गोद में सो जा।

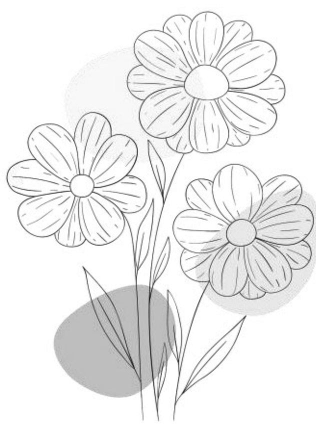

कल कोई और आएगा हारने,
और हार कर फिर हार जायेगा।

अपनों को खो के,
फिर जीतने निकल जायेगा।

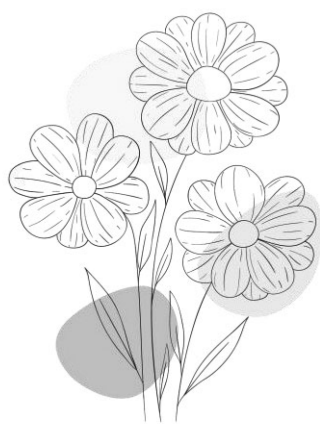

छोटे शहर का बड़ा बेटा

राजधानी परास्त हो गया मैं
ग्राम खो गया अपना,
न अब राजधानी में बसेरा है
और न ग्राम में निवास।

अब शोर में रहता हूँ
यादों को रो लेता हूँ,
कोई हाल-चाल पूछता नहीं
ग्राम पर अब तार जाता नहीं।

पिताजी से अब शब्दों में बात होती नहीं
अम्मा अकेले रहती हैं,
मैं समय का मारा
मिलने जा पाता नहीं।

क्या जवाब दूंगा जन को,
यह हिम्मत आती नहीं
अब शरीर नाम का है, मन गिर गया,
उसे उठाने का मन भी नहीं।

अब और पीड़ा झेलने की हिम्मत नहीं,
अब और मन नहीं।

विधवा मनसा

ढाल जो खड़ा पीछे
साथी जीवन का परलोक सधाए।

सुहागन सिंदूर मिटा, चूड़ी सफ़ेद,
श्रृंगार बेरंग चढ़ा।

कलेजा रो-रो पत्थर हो उठा,
पुत्र को छाती पकड़े कष्ट जताए।

व्याकुलता में पड़ी अर्धांगिनी,
अंदर से मौन पछताए।

प्रेम, जीवनी, तेरहवीं, सब सत्य है,
जीवन आख़िरी कब है,
यही सोच
अलग दुःख दिलाए।

भीड़ खड़ी हाथ जोड़े
ज़िंदगी और मांगे,
मृत्यु को दूर,
सुख और मांगे।

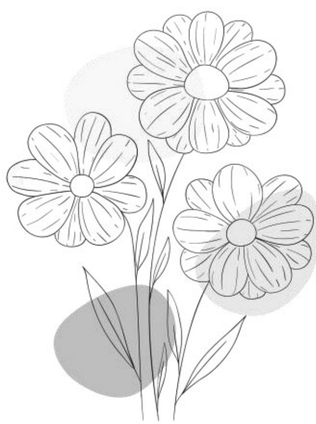

सुख कब?

वापस मिलन
दोबारा दर्पण।

बचपन का आगमन
पिता की गोद।

घूमने का स्वप्न
खिलौने की जिद्द।

माँ की हँसी
मेले की घुमाई।

भविष्य की बेफिक्री
सुकून की रात।

शाम का खेल
रात की पढ़ाई।

खाने पे किलकारी
दिवाली की खरीदारी।

छठ का अर्घ्य
नास्ते में दूध-मलाई।

वही पिता की पिटाई
नानी का दुलार।

सब सुख यही
सब स्वर्ग यही।

सब सुख स्वप्न यही
सब पीड़ा यही।

पराजय पे जीत

आख़िरी युद्ध की घड़ी
आन खड़ी है,
मस्तक पर राख सजी है।

आओ बलवान यमदूतों के गुलाम
मेरी बाहें हुंकार भरे
तुम्हारे स्वागत में खड़ी हैं।

भय की लकीर नहीं,
समय के हारे तुम,
तुम्हारा मुझ पर कोई वश नहीं।

संकट में दुर्लभ ईश्वर
अमृत लिए आ,
खिलौना अब मैं भी नहीं।

मृत्युलोक अगर युद्ध है
मैं भी अर्जुन खड़ा,
सब जीतूंगा इस मृत्युलोक पे।

सब यहीं दान कर जाऊंगा
मैं इस युग, पुनर्जन्म,
सब जीत जाऊंगा।

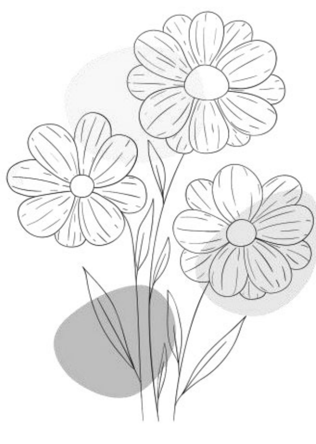

छोटी पुत्री वचन

न रोक न टोक,
समाज के तानों से अनजान,
पिता मुझे जानता था,
बिना बोले सब निछावर कर देता था।

सोना-चांदी,
आभूषण में तौले,
पैरों में मेरे दुनिया रख देता था।
माँ से बढ़कर स्नेह दिया,
पिता मेरा अनोखा था।

वह ईश्वर से बड़ा था,
हाँ, वो मेरा पिता था।

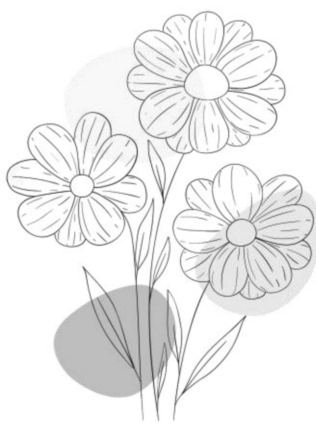

वीरानापन

मन के अंदर की चुप्पी
तोड़ती है-

प्रेम, लगाव, धैर्य,
अपनापन, मोह, गीत, उदासी,
खुशियाँ, सिद्धांत, समय,
ईर्ष्या, छल-कपट, घमंड, शोर,
त्याग, भ्रम, स्वास्थ्य, सुंदरता
मौसम, परिवार, प्रेमिका।

और फिर रह जाता है
वीरानापन।

जो ले जाता है
एकांत की ओर,
मरघट की ओर।

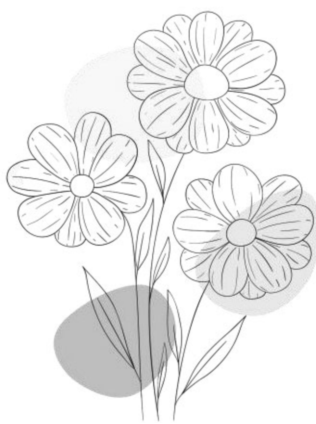

प्रेम से बैर

प्रेम हमें छत नहीं देता
पर विशाल चाँद
को तोड़ने का भ्रम
पूरा देता है।

ऐसे प्रेम की कल्पना
मनुष्य को हीन से
और भी हीन बना देती है,
रोटी और मकान
से दूर कर देती है।

घर पर जरूरतें
भुला देती हैं।

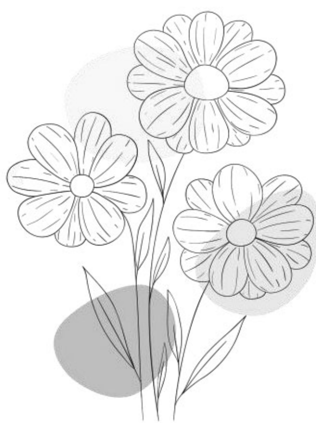

बैर से समझ

कवियों की बात
पशु, पक्षियों, फूलों से
होकर गुज़रती है।

स्वाभाविक है,
टूटी छत से झरझराती बूंदे
हर किसी को कीचड़
का बोध कराती हैं।

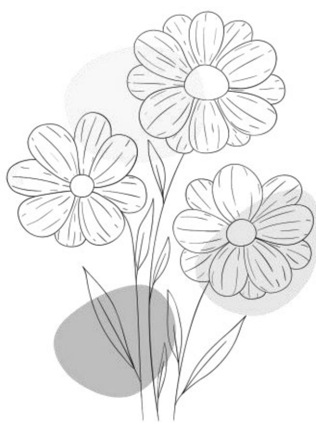

पूर्ण विराम

उप विराम भी
अगर मिल जाता
तो आख़िरी साँस
की गुज़ारिश होती।

स्वप्न खुशहाल न होते
पर अल्प विराम
ज़िंदगी हो उठती।

संयोजक चिह्न चलती रह गई

अंत:
पूर्ण विराम आ गया।
ज़िंदगी और खुशियाँ
दोनों पे समा गया।

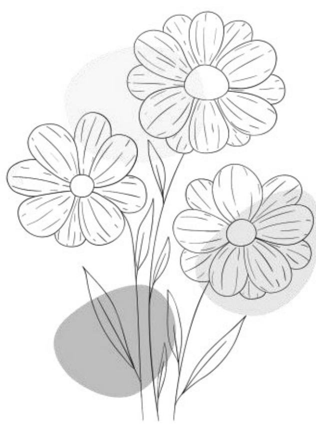

नियति का खेल

भय के ऊपर तांडव होगा,
जंग मे लाल लुहान बहेगा,
कर्म का बोया वापस आएगा,
थर-थर प्राण काँपेगा।

पाप का लेखा-जोखा खुलेगा,
मृत्यु-शंख बजेगा
जिसने जैसा किया,
वापस ब्याज चढ़े मिलेगा।

काल का लिखा सब होगा
सुख आएगा,
दुःख को जाना होगा
काल में लिखा,
सब वैसा का वैसा होगा।

चंचलता

मन की कथनी,
यह, कभी वो चाहिए,
आसमान के सारे रंग चाहिए।

शून्य का एकांत,
शहर का शोर
भी चाहिए।

प्रेम और प्रेमिका,
दोनों चाहिए।

गाड़ी से मकान,
ऊँच चाहिए।

गाँव की खुशबू,
शहरों का मनोरंजन चाहिए।

इस पुरुष को,
मृत्युलोक पे
अमृत चाहिए।

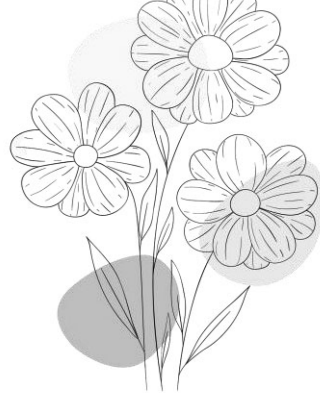

मंगल दूर नहीं

हिस्से की अधम निशा
अब सूर्योदय देखेगी।
घर की तुलसी
फिर से महकेगी।

बीती हुई त्रासदी,
मदनोत्सव बनकर आएगी।
तुम्हारे आँगन की खामोशी
फिर गीत सुनाएगी।

जाने वाले देवता
रूप में आएंगे।
अपनी उपस्थिति से
फिर रौनक लाएंगे।

घर पर उसकी
करुणा सब पर आएगी।
तुम फिर जी उठोगे,
हर पल का आनंद मनाओगे।

आपदा के बाद
अब बहारें आएंगी।
अब खुशियाँ
फिर आएंगी।

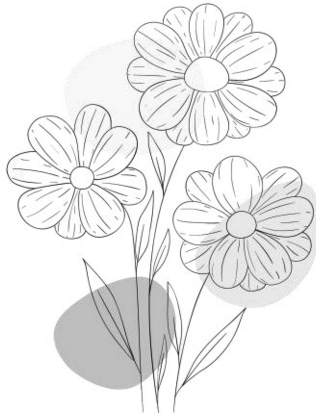

कल के बाद आज,
खुशियाँ फिर आएंगी।

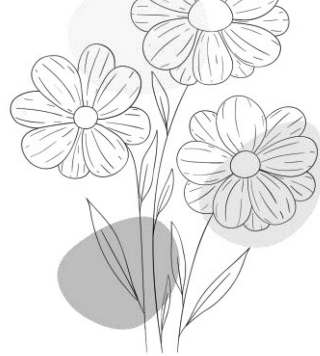

मौन का समय

जीवन जब हताश लगे
मौन धरो।

परिस्थितियाँ जब चुनौती दें
मौन धरो।

जीत का शंख शोर भरे
मौन धरो।

जवानी बोझ लगे
मौन धरो।

समाज ताने दे
मौन धरो।

अभिमान अहंकार बने
मौन धरो।

कागज़ देवता लगे
मौन धरो।

परिवार छल करे
मौन धरो।

स्वप्न सच लगे
मौन धरो।

शिखर चढ़ो
सुख भोगो।

मौन धरो,
मौन धरो।

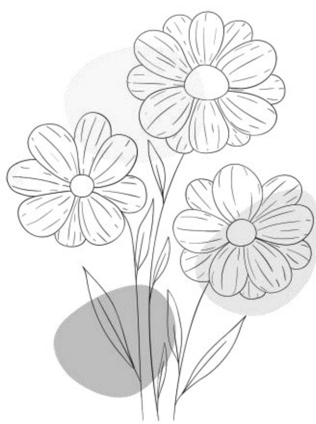

यात्रा

कांधे पे सवारी उठाए
कदम चल पड़े।

बाबू,
कौन सी गली से है घाट
रास्ता पूछत-पूछत जाये।

सत्य-सत्य की गुहार लगे
बिना जिम्मेदारी के सवारी
हाथी घोड़ा बेच के,
मदमस्त सोते चले।

चालक डगमगाए,
सवारी का भार कंधे पे घाव बनाए।

बांस की लकड़ी पे लेटे भी मुस्कुराए
जो कभी मुलायम गद्दे की गुहार लगाए।

सवारी स्नान कर,
७ (7) मन चंचल चिता खटिया
पे जाने को उत्सुकता दिखाए।

मानो जैसे जीवन भर जंग कर
आराम करने को आए।

चालक किराये में उम्मीद धन मांगे
मोल-तोल की आदत लिए
सवारी चुप-चाप पड़े मुस्कुराए।

घी चंदन का लेप लगे
सवारी मन मस्त होके विदाई राग गाये।

आराम की इतनी जल्दी
फट से तन त्याग जाए।

नए सफर की यात्रा में
यात्री फिर निकल जाए।

जीवनी

लौटते तुम कभी
तो घर सजा देता,
तुम्हारे पसंद का भोजन
थाली में परोस देता।

तुम विश्राम करना चाहते
तो बिस्तर भी लगा देता
एक बार प्यार से बुलाते
तो मैं यह सारी तकलीफें,
भुला देता।

मैं फिर बच्चा बन
खिलखिला लेता,
तुम्हारी एक आवाज़ पे
मैं फिर शिशु बन जाता।

तुम्हारी एक आवाज़ पे
मैं फिर शिशु बन जाता।

यादों के मोती

और फिर,
सूर्य चमक लिए आ गया
मेरे आँगन में
जिसका मैं इंतज़ार कर रहा था
रातों से।

मैंने उसे आवाज़ लगाई
पर उसने सुना नहीं
फिर बात हुई नहीं।

मैं गुमसुम खड़ा रहा
वो चुपचाप मुझे तस्वीर
से देखता रहा।

रोज़-रोज़ यही होता रहा
मैं बुलाता रहा,
वो मुझे तड़पाता रहा।

अब तो न दूर जाता है
ना पास आने देता है,
बस तस्वीर से
मुझे एकटक
देखता रहता है।

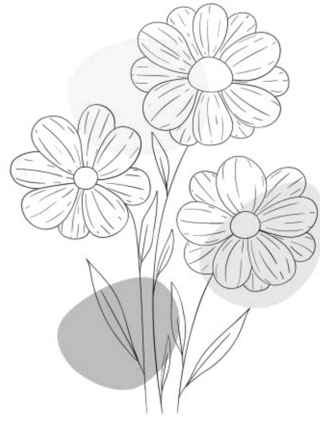

पर मैं भी ढीठ हूँ,
रोज़ यही कर्म दोहराऊंगा
मैं रोज़ उसे बुलाऊँगा।

मति मेरी भले
मारी गई है,
मैं फिर भी उससे एक रोज़,
मिलना चाहूँगा।

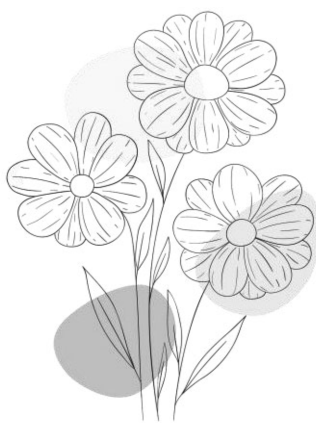

नसीब का मिला

हथेली का खींचा
भी नहीं मिलता
तेरे जाने के बाद
मन का फसल भी नहीं खिलता।

सो कर भी नहीं सो पाता
करवटों से लड़कर भी
जीत नहीं पाता।

मैं खुद को भी
पूरा नहीं मिलता।

मैं किसी को
पूरा बनकर भी नहीं मिलता।

खुश होने की कोशिश करता हूँ
पर वो भी नहीं कर पाता।

इतना सच्चा हो गया हूँ
खुद से छल भी नहीं कर पाता।

अकेले खड़ा रहता हूँ
झरने के आगे,
कि आँखों का पानी उसमें मिलकर
बह जाए।

क्योंकि,
सामने किसी के
अश्रु बहा नहीं पाता।

जाता हूँ दफ़्तर
बड़ी मुस्कान लिए
खुद को गिरा के,
कोई पूछ ले हाल-चाल
तो बता नहीं पाता।

था मैं कैसा
अब हूँ ऐसा।

अब मुझे
नसीब का तिनका भी नहीं मिलता।

जा नसीब,
मैं अब तुझको नहीं मिलता।

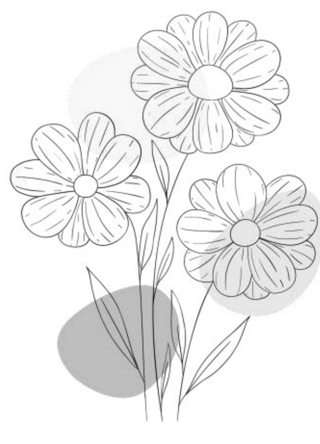

प्रेम के लिए

थोड़ी शाम लाया हूँ,
दफ़्तर से कुछ वक़्त
चुरा लाया हूँ।

थोड़ी चंचलता भी लाया हूँ,
दफ़्तर में समझदारी
छोड़ आया हूँ।

थोड़ी मोहलत और माँग लाया हूँ,
दफ़्तर में अनुपस्थिति का पत्र
दे आया हूँ।

मैं निकल आया हूँ,
दफ़्तर की तकलीफ़ें भी
वहीं भूल आया हूँ।

मैंने कहा न, आज

थोड़ी शाम लाया हूँ,
दफ़्तर से कुछ वक़्त
चुरा लाया हूँ।

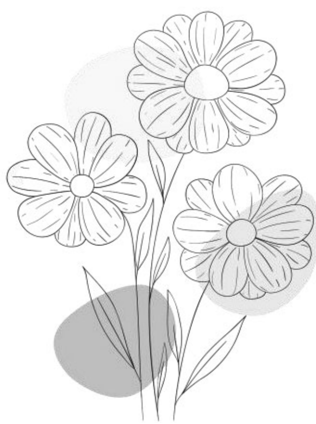

समझ

शोर नहीं, मधुरता
धूप नहीं, रात्रि
खोज नहीं, शांति
मिलन नहीं, तप
जीवन नहीं, दर्पण

मृत्यु नहीं, सत्य।

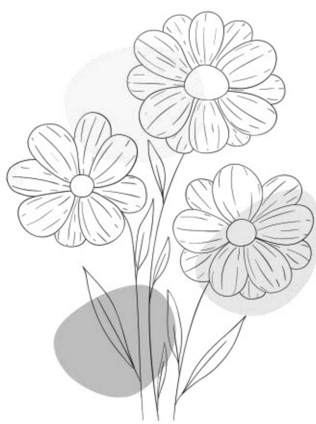

स्थिरता कब?

आके, जाके
हम चले गए
घर से दूर,
बहुत दूर।

रो के, हँस के
हम चले गए
घर से दूर,
बहुत दूर।

भय-लालच में
हम चले गए
घर से दूर,
बहुत दूर।

पुण्य-पाप ढूंढने
हम चले गए
घर से दूर,
बहुत दूर।

सुरत-नूरत से मिलने
हम चले गए
घर से दूर,
बहुत दूर।

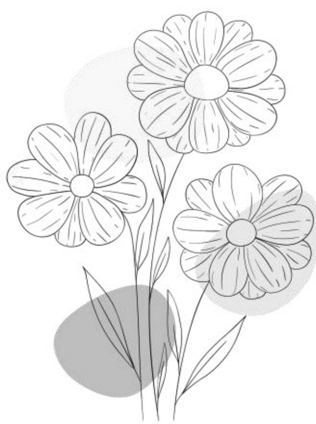

घर बनाने के लिए
हम चले गए
घर से दूर,
बहुत दूर।

अब घर आएंगे
तो घर से दूरियाँ
खत्म होंगी।

समझ से समझौता

यह आस-पास के लोग समझते हैं,
कि वो सब समझते हैं।

खुद का पता नहीं,
पर बात-बात पर अकड़ते हैं।

रोज़ उधार की साँस लिए
ज़िंदगी का मोल-भाव बताते हैं।

खुद मुकुट चढ़ाए,
सादगी का अर्थ खोजते हैं।

शैतान का रवैया अपनाए,यह अंधे
खुद को ईश्वर भी बुलाते हैं।

बिना शब्द जाने,
अपने को लेखक जताते हैं।

असलियत खोल दूँ,
तो गवैया बन जाते हैं।

यह साले बात-बात पे
खुद को बड़ा बताते हैं।

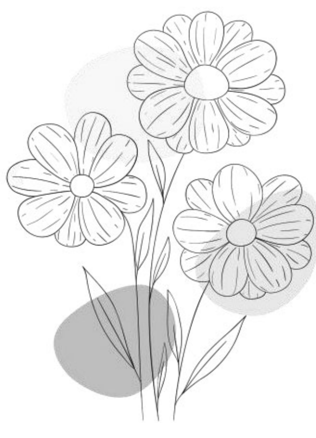

सामने वाले को छोड़,
अपना आलाप घूम-घूम सुनाते हैं।

बिना कुछ समझे,
सर-पैर को कमल पे रख चलते हैं।

अपना झूठ उगाए,
दूसरे के सच पर पानी फेर देते हैं।

घमंड की गाड़ी लिए,
पूरे शहर को छोटे से छोटा बताते हैं।

खुद की थाली छोड़,
दूसरे की सूखी रोटी भी खा जाते हैं।

फिर समझदारी का दिखावा करते हैं।

यह आस-पास के लोग समझते हैं,
कि वो सब समझते हैं।

घूमे मन में

जागे जागे,
निज मन जागे।

सफर का राही,
मारा-मारा भागे।

रात को जागे,
रो-रो दिन काटे।

रात का राही,
सुकून मांगे।

कर्म बंध
जन्म-मरण
घूम-घूम काटे।

खुद का सताया,
माला से माफी मांगे।

जागे जाने,
निज मन जाने।

सफर का राही,
मारा-मारा भागे।

मांगना

बैर नहीं
गैर नहीं
क्या मेरा
क्या तेरा
इसका कोई प्रश्न नहीं।

सोना देकर
पत्थर कौन मांगे?
पक्की छत छोड़
टीन की छत कौन मांगे?

फूट पड़े मन
जल पड़े तन
बाप को छोड़,
भोग कौन मांगे?

भाई से, ननिहाल से,
भूमि कौन मांगे?
रिश्तों में संताप कौन मांगे?

छोटा या बड़ा
मां का हिस्सा कौन मांगे?
आँसुओं का बँटवारा कौन मांगे?

अपने हो जाएं गैर,
कौन मांगे?

अंदर का लालच,
यह सब मांगे।

खुद प्रश्न से बच,
देख लालची,
तू, क्या-क्या मांगे?

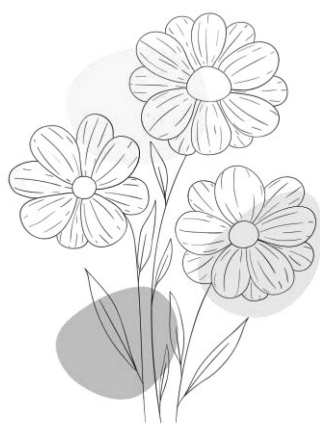

मोड़ के उस पार

देखा मैंने तुम्हें मोड़ के उस पार,
मायूस खड़ा था मैं इस पार।

आवाज़ लगाई कई बार,
तुम टस से मस न हुए एक बार।

मैं आँसुओं में डूबा,
धँसता गया इस पार।

तुम्हें भनक भी न लगी उस पार।

इस पार, उस पार,
दूरी खटकने लगी हर बार।

मिलन का वक़्त गुज़रता गया,
हर पल मैं डरता गया।

तुम चले गए,
मैं रह गया इस पार।

मैं अकेला रह गया,
हर बार।

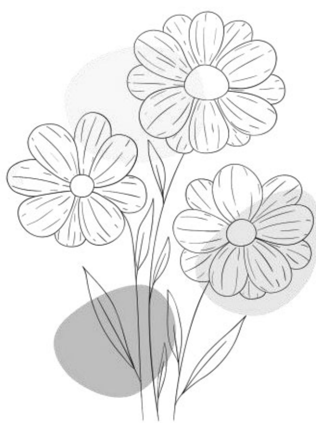

जवाब दे ज़िंदगी

कितना हँसाएगी तू ज़िंदगी
कितना और चिढ़ाएगी
क्यों मुझे नहीं रोने देती,
मुझे चैन से मरने क्यों नहीं देती?

क्या चाहिए तुझको मुझसे?
न मैं काम का हूँ,
न किसी का खास हूँ,
सबके लिए सिर्फ़
ज़रूरत का सामान हूँ।

अकेले में भी खुश हूँ,
सबके साथ भी मायूस हूँ।
ज़िंदगी, क्या चाहिए तुझको मुझसे?
मैं तो इंसान ही खराब हूँ।

फिर पूछता हूँ एक बार,
सोच-समझ ले अब,

कि,
कितना हँसाएगी तू ज़िंदगी,
कितना और चिढ़ाएगी
क्यों मुझे नहीं रोने देती,
मुझे चैन से मरने क्यों नहीं देती?

एक चिट्ठी आपके नाम

प्रिय नानापा,
मैं अब बड़ा हो चुका हूँ,
झूठा मुस्कुराना सीख चुका हूँ।

मिट्टी में गाड़ दिए हैं शौक
जिम्मेदारियों की पेटी उठा चुका हूँ।

अंधेरे से डरता था मैं कभी
अब उससे भी लड़ चुका हूँ।

अंधेरे को हराकर,
आगे बढ़ चला हूँ।

आफ़तों से नहीं घबराता अब,
आपका सिखाया याद रखता हूँ।

आपके जाने के बाद,
नानी का ख्याल रखता हूँ।

अब सबका ध्यान रखता हूँ।

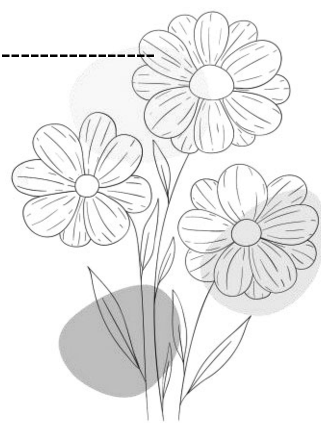

II दूसरा भाग II

रोज़ पूछता हूँ
हँस के हालचाल
रोज़ ‘खुश हूँ’ का छलावा करता हूँ,
नानी को खुश रखने के लिए
उन्हीं से झूठ बोलता हूँ।

सच बताऊँ तो
कुछ ठीक नहीं लगता,
जीने का मन भी नहीं करता,
रूप देखकर उनकी
हिम्मत आती है,
पर सोच के भी
ज़माने की खुशियाँ
चरणों में रख नहीं पाता।

लायक बनकर,
खुशियाँ घर ले जाना चाहता हूँ,
अपनी नानी की गोद में
फिर सोना चाहता हूँ।

मैं आपके साथ
फिर अपना बचपन
जीना चाहता हूँ।

थक जाता हूँ बस कभी-कभी
इसलिए गमगीन हो जाता हूँ।

ईश्वर से लड़ सकता नहीं,
खुद को चुप करवा के सो जाता हूँ,
सुबह होते ही
फिर दफ़्तर निकल जाता हूँ।

अंत:

चिंता को रखना दूर आप,
मैं सब सँभालने लायक बन गया हूँ।

बस एक विनती करना स्वीकार
कि अगर अगला जन्म मुझ पापी को मिले
तो पापा आप ही बनना,
नानी तुम मेरी माँ बनना।

आपका पुत्र

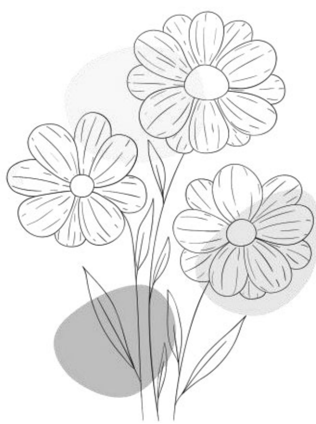

ईश्वर मन में आए

गिरी हिम्मत उठा प्यारे
अभी जीवन और है प्यारे।

इतने में हार गया तो
क्या जीतेगा,
अभी तो आगे युद्ध और है प्यारे।

राह का राही बन,
हर दुःख को बाहें खोल
स्वीकार कर प्यारे।

मेरा हाथ है तुझपे,
थोड़ा और विश्वास रख प्यारे।

अगर–मगर हिसाब

यह अगर-मगर की क्या बात है,
दिल पे लगे घाव की क्या बात है?

यह ज़माना पल-पल क्यों छेड़ता है,
इस तरह मुझे छेड़ने की क्या बात है?

मैं तो प्रेम भी नहीं करता अनजानों से,
फिर भी मिली पीड़ा की क्या बात है?

मन पे डाका डाल जो तू बैठा है,
तो इसमें हक़ जताने की क्या बात है?

शरीर के गुलाम हो इस जन्म के,
इसमें रंग पे इतराने की क्या बात है?

फँसते-फँसते लालच में फँस चुके हो,
तो इसमें घबराने की क्या बात है?

ज़िंदगी एक दिन आजाए माँगने हिसाब,
तो किरायेदार की तरह छुपने की क्या बात है?

मिल के भी ना मिला

किसी को कितना मिल जाता है,
किसी को इतना भी नहीं मिलता।

मैं भी कहाँ का अभागा हूँ,
जिसे दोनों में से कुछ नहीं मिलता।

किसी को कितना प्रेम मिलता है,
किसी को एक तिनके-सा भी नहीं मिलता।

मैं भी कहाँ का अभागा हूँ,
जिसको दोनों में से कुछ नहीं मिलता।

मैं, अहंकार

छपाक कर चढ़ जाएगा घमंड,
घर टूट जाएगा।

जितना कमाया है अभी तूने,
सब छूट जाएगा।

दासी मेहनत का बन,
बुरा है "मैं" को पहचान।

सादगी रूप कर धारण,
सात्विक जीवन कर स्वीकार।

"मुझ" को "मैं" मत बनने दे,
खुद को खुद का दासी मत बनने दे।

आग में जल रहे शहर को,
पानी भी मत पीने दे।

यह पेड़ों का श्राप है,
शहर में अधर्मियों का कर्मकांड है।

जाएगा अगर बन कर "मैं",
तो फिर होगा बैर।

तुझको भी लपटें जकड़ेंगी,
तुझे भी तड़पा-तड़पा मारेंगी।

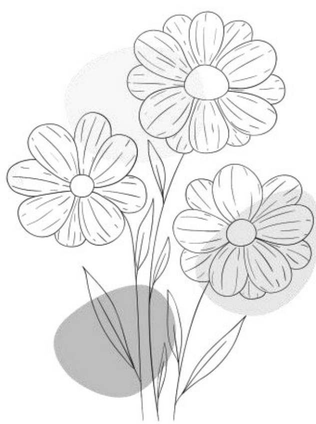

फिर तू भी गुहार पानी की लगाएगा,
एक बूंद दया के लिए तरस जाएगा।

अभी भी वक्त है सँभलने का,
अभी भी वक्त है कर्म सुधारने का।

सदियों की यह बात याद रख
"मैं" के हैं सब दासी,
तू बना रहना संन्यासी।

फिर से,
"मैं" के हैं सब दासी,
तू बना रहना संन्यासी।

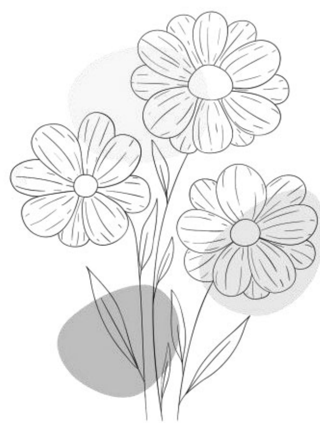

सौतन

कौन हो तुम मेरे,
क्या लगते हो मेरे,
क्या चाहते हो मुझसे,
क्यों पीछे पड़े हो मेरे,
क्यों नहीं मुझे घर जाने देते?

किस लिए रोज़ आते हो,
किस लिए तड़पाते हो?
तुम शाम होते चले
क्यों नहीं जाते।
तुम सोमवार को मर,
क्यों नहीं जाते।
चाकरी हो, सौतन नहीं,
यह तुम भूल क्यों नहीं जाते?

अरे ओए दफ़्तर की चाकरी!

कौन हो तुम मेरे,
क्या लगते हो मेरे,
क्या चाहते हो मुझसे,
क्यों पीछे पड़े हो मेरे,
क्यों नहीं मुझे घर जाने देते?

किस लिए रोज़ आते हो,
किस लिए तड़पाते हो?

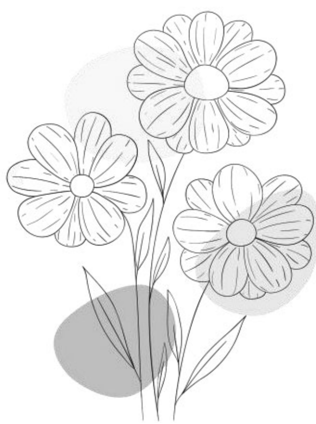

माँ और शहर

रोज़ मिलता हूँ
मैं अपनी औकात से,
भीड़ में धक्के खाते हुए।

एक माँ ही थी
जो मुझे घर पे
"राजा बेटा"
बुलाया करती थी।

रोज़ निकलता हूँ
किराए की छत से,
महीने का हिसाब देते हुए।

एक माँ ही थी
जो मुझे घर पे,
दुलार से रखा करती थी।

रोज़ जिया करता था मैं,
मेरी माँ मुझे मरने नहीं देती थी।

देख,
दूर के पुर,
तूने मेरी क्या
दशा कर दी,
अब मैं सिर्फ़ मर-मर के जीता हूँ।

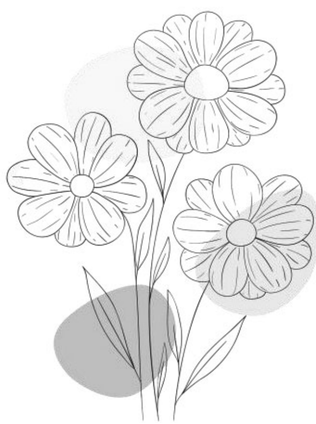

जाने दे अब
या ज़िंदा कर दे।

मुझे अपनी कैद से
आज़ाद कर दे।

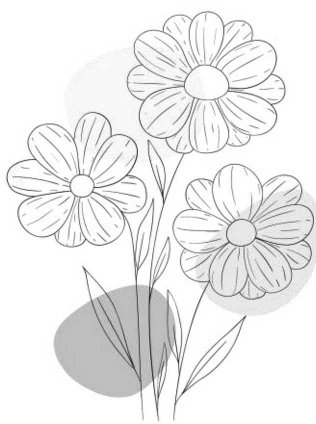

एक अंतिम ज़िद्द

पहने लिबास
के खरीदार नहीं।

कौन अपना है
कौन पराया,
इसका आभास नहीं।

कौन देखे चाँद
जब उससे लगाव नहीं,
कौन तारे गिने,
जब मन में शांति नहीं।

कौन सर पकड़ जग घूमे
कौन सुनाए अकेलेपन की बातें,
जब सुनने वाला कोई साथ नहीं।

था एक,

ख़्वाब में हँसने वाला,
जो अब स्वप्नावस्था में जाता नहीं,
सांसें लेकर भी जी पाता नहीं।

पर विश्वास है,

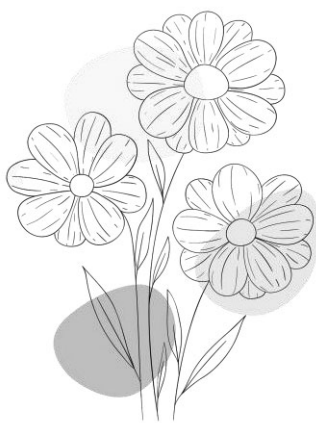

उगेगा वो सूर्य से ऊँचा,
अभी थका ज़रूर है,
ख़ुद से रूठा ज़रूर है,
मगर संघर्ष से हारा नहीं।

फुर्सत का काम

काम-काज से फुर्सत मिले
तो प्रेमिका को देखना।

काम-काज से फुर्सत मिले
तो घर को देखना।

काम-काज से फुर्सत मिले
तो पुराने मित्रों को देखना।

काम-काज से फुर्सत मिले
तो ढलते सूरज को देखना।

काम-काज से फुर्सत मिले
तो गुजरे बचपन को देखना।

काम-काज से फुर्सत मिले
तो घड़ी को भी देखना।

काम-काज से फुर्सत मिले
तो खर्च होते हुए खुद को देखना।

काम-काज से फुर्सत मिले
तो बचे सुख को देखना।

काम-काज से फुर्सत मिले
तो काम में खर्च हुए लोगों को देखना।

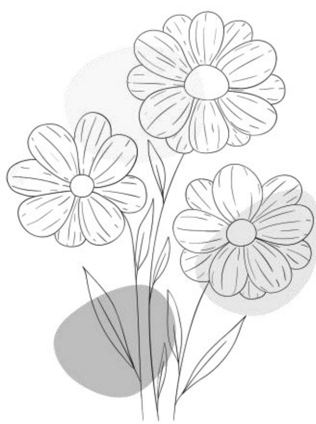

काम-काज से फुर्सत मिले,
तो श्मशान को देखना।

काम-काज से फुर्सत मिले,
तो कितना अकेला, अभागा हूँ मैं,
इस ख्याल को भी देखना।

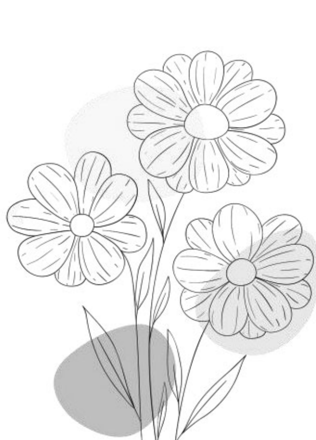

अदोषी

समाज ही दोषी है
मेरे खोए हुए बचपन का।

सिसकती रातें दोषी हैं
मेरे बेचैन स्वप्न का।

परिस्थितियाँ भी दोषी हैं
मेरे सूखे अश्क का।

या,
यह कम्बख़्त मैं ही हूँ,
दोषी खुद का?

कौन समझता है?

कौन कितना समझता है
तुमको तुमसे ज़्यादा
कौन समझता है।

एकांत चाहिए तुम्हें
यह भीड़ कहाँ समझती है,
तुमको तुमसे ज़्यादा
कौन समझता है।

आवारगी कौन समझता है
तुम अंधेरे से भागते हो
यह कौन समझता है।
अरे, तुमको तुमसे ज़्यादा
कौन समझता है?

जो कहे, "मैं तुम्हें समझता हूँ,"
हँस मत देना इस समझ पर।
तुम इस युग के नहीं हो,
आख़िर यह परलोक की बातें
मृत्युलोक पर
कौन समझता है।

तुमको तुमसे ज़्यादा
कौन समझता है।

ख़ुशियाँ और ग़म

कसमें न लेना, प्रियतमा मुझसे,
ये अक्सर टूट जाया करती हैं।

दिल चंचल, दुर्लभ, शौकीन है मेरा,
तो नादानियाँ हो जाया करती हैं।

दुनिया का ग़म चाहने की आदत है मुझे,
इसलिए ख़ुशियाँ छूट जाया करती हैं।

यह मेरी चाहत की चाहत भी अजीब है,
सबको मुझसे दूर कर जाया करती हैं।

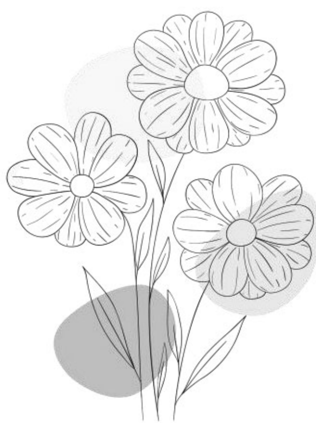

व्याकुल प्रेम

पिया संग प्रीत लगाई,
मिष्टी वाणी में फँसत चल गई।

करुणा हृदय लिए,
मैं पिया के लिए फाँसी चढ़ गई।

शोभित मधुर रात्रि,
मन भंवर लिए,
छत पे सुनसान खड़ी,
मैं पिया की याद में तरस गई।

कतरा-कतरा भोर चढ़ा,
मैं व्याकुल, दीदार देखने तड़प गई।

आँगन खड़ी प्रतिक्षण में,
मैं पिया की राह में रुदन बन गई।

फिर बताऊंगा

आज लिखा है मैंने कुछ,
अर्सों बाद प्रेम लिखा है।
तुम थोड़ा और सँवर लो,
फिर बताऊँगा।

थोड़ी शाम और ढलने दो,
रात को हल्का और चढ़ने दो।
तुम थोड़ा और सँवर लो,
फिर बताऊँगा।

जन्म का साथ लिखा है,
आख़िरी सुई का हिसाब लिखा है।
तुम थोड़ा और सँवर लो,
फिर बताऊँगा।

बिंदी शीशे पे लगी है,
चूड़ियाँ बक्से में क़ैद हैं।
तुम थोड़ा और सँवर लो,
फिर बताऊँगा।

एक उम्र हो गई तुम्हें निहारते हुए,
अभी भी तेज़ वही है।
तुम थोड़ा और सँवर लो,
फिर बताऊँगा।

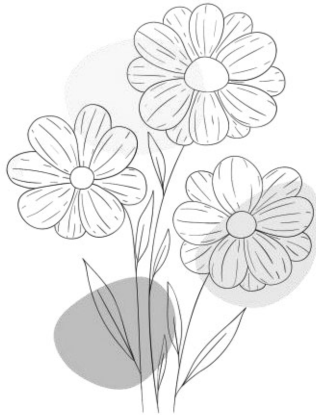

अब बहुत रात हो गई है,
आज मिलने नहीं आ पाऊँगा।
तुम थोड़ा और सँवर लो,
फिर बताऊँगा।

मैं कल फिर आऊँगा,
असल में नहीं तो यादों में।
तुम थोड़ा सजती-संवरती
रहा करो मेरे लिए,
आगे की बात,
फिर कभी बताऊँगा।

गले लग जा

गले मिला करो पिता से,
दिल की आवाज़ सुनाई देगी।

कितने क़र्ज़ मे हैं वो,
इस हक़ीक़त से पहचान होगी।
पिता हैं जो, कल न होंगे,
इस भय से मुलाकात होगी।

कल तुम भी पिता बनोगे,
पुत्र को गले लगाने की तड़प होगी।

गले मिला करो पिता से,
कल तुम्हें भी उनकी कमी होगी।

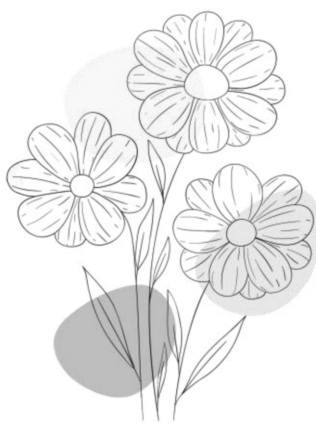

लल्ला की नींद

निंदिया,
कहाँ है रे तू बावरी,
लल्ला के पास क्यों नहीं आवे?

क्यों तनिक-तनिक परेशान करे,
व्यर्थ लल्ला को पूरी रात सतावे?

सुंदर लल्ला है मेरा,
तू भी माँ जैसी लागे,
अजोरी,
अब और विलंब मत कराए।

उठूंगी तो लल्ला का खाना बनाना है,
घर का सब काम-काज सुधारना है।

अरे ओ बावरी निंदिया,
काहे प्यारे चाँद से लल्ला को नज़र लगावे?

अभी सो लेने दे बेच के हाथी,
जीवन खड़ा है सामने इंतजार में,
फिर तू चाह के भी न आ पाएगी लल्ला के पास,
तू व्याकुल रह जाएगी मिलने की तलाश में।

आज मेरे लल्ला को सोने दे,
आने वाले कल से उसे बचाने दे।

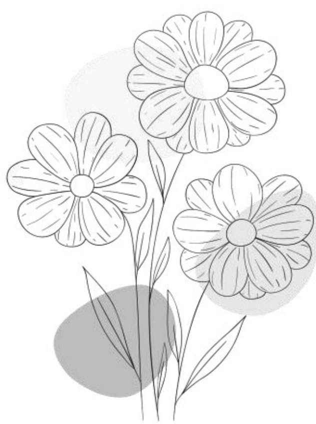

आ जा,
अब और धीरज मत खोवा,
लल्ला को प्रेम से सुला
और न तड़पा।

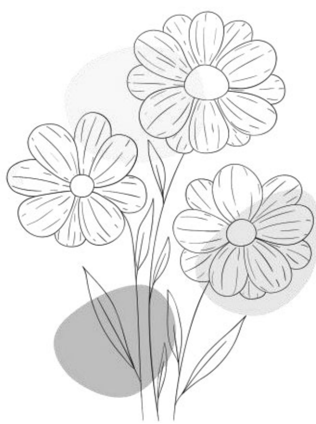

तुम तक हूं मैं

खालीपन से तुम तक का सफर,
बदलाव है मेरा।

बेरंग आवारगी से तुम तक का सफर,
निश्चय है मेरा।

कई उलझनों के बाद तुम तक सुलझा आया हूँ,
कई तीर्थ के बाद तुम तक सीधे पाँव आया हूँ।

अब तुम्हारी इच्छा पे है जीवन मेरा,
अब तुम्हारी शर्तों पे है उद्धार मेरा।
जो जीवनदान दो तो जी लूंगा,
जैसा रखना चाहो, रह लूंगा।

भीषण तप में भी मुस्कुरा दूंगा,
तुम्हारे लिए सब कर जाऊंगा।

क्योंकि,
तुम मेरे लहू का रंग हो,
मेरे जीने का अर्थ हो।

मानसिकता

अंदर का भंवर
शोर मचाए
जगत-सुख की ओर
उत्सुकता दिखाए।

ध्यान में धन की कामना भरे,
जल्दी-जल्दी
हर काम अधूरा कर जाए।

समय से तेज़ बढ़े,
खुद को हराए,
मानव जाति
सबको पीछे छोड़ आए।

अंगारों से लिपटे
ख्वाबों संग,
जल्दी-जल्दी
श्मशान पहुँच जाए।

आस-पास की खूबसूरती भूल,
होड़ में जीत के आगे निकल जाए।

दिन-दिन,
रात-रात खुशियों को भुला
रोज़ के हार का
शोक मनाए।

भुला परिवार,
कौन होगा खानदान,
कागज़ का चश्मा चढ़ाए,
सब गँवाए।
मनुष्य खुद के झूठ से
कभी निकल न पाए।

"आज और चाहिए"
की लालसा में,
सब खोता जाए।

आहिस्ता हो जायेगा सब

आहिस्ता
होगी ज़िंदगी गुलज़ार,
तितलियाँ दोबारा फूलों पर मंडराएँगी।

मैं नए गीत फिर गाऊँगा,
मैं फिर आँखों से मुस्कुराऊँगा,
चलते-चलते,
सारी हदें पार कर जाऊँगा।

और आहिस्ता,
होगी ज़िंदगी गुलज़ार।

किताबों में गुलाब की महक चढ़ जाएगी,
जिस दिन खोलोगे किताब
मेरा प्रेम-गीत पाओगे
हँसते-रोते उसे पढ़,
फिर किताब से लिपट जाओगे,
इसी तरह दरमियाँ मेरी साँसें ज़िंदगी छोड़ जाएँगी,
और आहिस्ता,
होगी ज़िंदगी गुलज़ार।

हरे-भरे पेड़ हवाओं के साथ हो जाएँगे,
उसी पेड़ के नीचे मैं बाँसुरी बजाऊँगा।
तुम मुझे देखने दूर गाँव से आओगे
हृदय को मिलेगी तुम्हारे ठंडक,

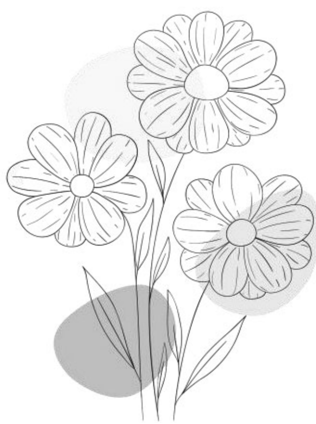

और आहिस्ता,
होगी ज़िंदगी गुलज़ार।

वीर बनो

युद्ध मेरा घर है,
मैं यहाँ का वीर।
आओ अगर रण पर,
तो शंका छोड़ आना।

शब्दों के बाण चलाओ,
छेद दो सीना।
कायरों की तरह नहीं,
मर्द की तरह आओ।

पीठ पीछे से नहीं,
सामने से तलवार चलाओ।
बुज़दिली के तुम सरताज,
ईर्ष्या के नहीं तुम हक़दार।

उठो, वीर बनो तुम,
सामने से युद्ध करो
फिर पुरुष बनो तुम,
मेरे क़द लायक बनो।

हाँ, युद्ध के लायक साहसी बनो तुम।

जीत की ओर

चढ़ा है ख़ौफ़ इस तरह
ज़मीर डगमगाने लगे,
उल्फ़त में कटी रात,
और सुबह तन थकने लगे।

पावन-सी चाल चले
परवाना सिमट खड़ा हुआ,
दुष्ट जगत का विष पी,
चिंता से मुक्त हुआ।

उठ जा अब परवाने
जाल से निकल,
ख़ुद को उठा,
अंदर सोए जज़्बे को जगा।

ख़ौफ़ छोड़
अब जीत के दिखा।
ख़ौफ़ छोड़
अब जीत के दिखा।

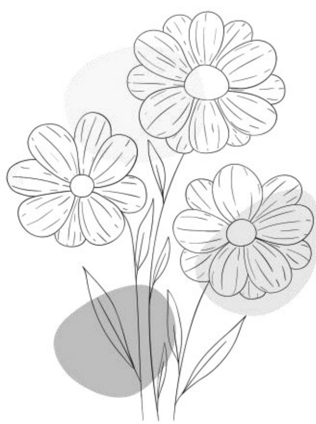

लौट आओ

कई दफ़ा देखना भी बहुत नहीं लगता,
बिछड़ने के बाद
कहीं और दिल नहीं लगता।

शाम की चाय गरम रखी है,
हो सके तो पीने लौट आना।
वादा करता हूँ —
अब कुछ नहीं माँगूँगा,
ना घर,
ना खिलौने,
ना ज़िद्द।

बस जिस रूप में गए,
उसी में लौट आओ,
रंगीन कपड़े अपने वापस ओढ़े लौट आओ।

मेरे साथ बैठो, बातें करो,
फिर से वही साथ…
शुरू करो।

तुम सा नहीं देखा

सुबह को शाम होते देखा,
मैंने तुझको जाते देखा।
बेबसी में चूर,
मैंने ख़ुद का बचपन खोते देखा।

रेगिस्तान की रातों में,
स्वप्नों को सूखते देखा।
मृत्यु जैसे जीवन में,
तुझको हर दिन जीते देखा।

राजनीति से दूर,
अपनों के लिए हँसते देखा।
मोल-भाव से परे,
मैंने तुझको,
तेरी नज़रों से देखा।

मौत ज़िंदगी से बड़ी है क्या?

मौत,
ज़िंदगी से बड़ी है क्या?
जो मेरे आगे आ खड़ी है,
कोई ये समझाए इसको
अभी परिश्रम मेरा और है,
इस युग में कर्तव्य बाकी और है।

इसे मुझसे डर नहीं लगता क्या?
ये मौत मुझसे भयभीत नहीं होती क्या?
इसे क्या लगता है,
मैं इससे डर गया?
जीवन का दुःख-सुख है मेरा,
तू आख़िरी पड़ाव का आराम है मेरा।

जा,
अभी नहीं आऊँगा,
अभी परिश्रम मेरा और है
इस युग में कर्तव्य बाकी और है।

तू कैसे निर्लज्ज की तरह आजाती है,
खुशियों को उलट-पलट कर जाती है?
थोड़ी मर्यादा रख,
करुणा रख,
ऐसे बिना बताए मत आया कर,
मेहमान की नस्ल नहीं है तू।

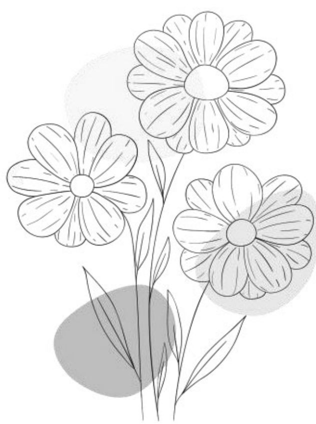

तू मुझसे बड़ी है क्या?
मैं फिर पूछता हूँ,
मौत,
ज़िंदगी से बड़ी है क्या?

मैं स्वयं आदेश दूँगा,
तब आना,
तो बैंड-बाजे लिए
मैं हँसते हुए चलूँगा तेरे साथ।
पर उससे पहले याद रख,
अभी परिश्रम मेरा और है
इस युग में कर्तव्य बाकी और है।

अगर जल्दी है तुझे ले जाने की,
तो मेरा उधार ले जा
ज़िंदगी का श्राप ले जा
मेरे घर का ग़म ले जा।
पर मुझे,
मेरी मर्ज़ी के बिना
देखना भी मत।

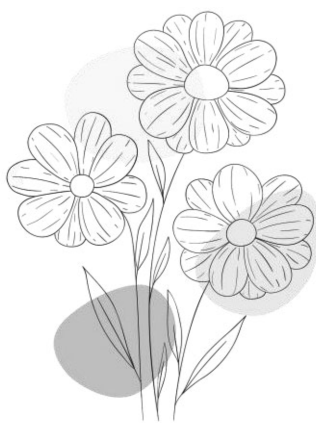

बताया ना तुझको,
अभी परिश्रम मेरा और है
इस युग में कर्तव्य बाकी और है।
मैं सब मानूँगा बातें
पर अपनी इच्छा से।
अभी नहीं आऊँगा तेरे साथ
अपनी मर्ज़ी से।
जा, अब कहीं और जा,
तू मुझसे बड़ी नहीं।

किसी और को ये पूछने दे,
मौत,
ज़िंदगी से बड़ी है क्या?

यह बंदा

उठे जब-जब अंगारे
बदलाव आता है।
हताश गिरा व्यक्ति
दोबारा ज़रूर उठता है।

चुप गली से गुज़रता
रात को चीखता-चिल्लाता है।
यह बंदा,
सर पर,
कफ़न बाँध चलता है।

इस पर किसी का वश नहीं
यह अकेला ही आया
इस पर किसी का ज़ोर नहीं।

तपती श्मशान पर
मुस्कुराता खड़ा रहता है।
मैंने सुना है
यह बंदा,
सर पर,
कफ़न बाँध चलता है।

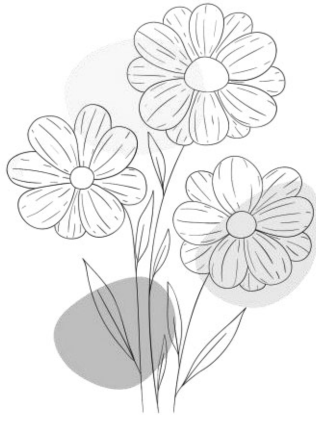

अनबन ख्याल

चित्र रंगीन
मन सफ़ेद।

तू ग़ैर
मैं पराया।

तन मिट्टी
सोच निरंकार।
तू शंकर
मैं कैलाश।

गुलशन बगिया
मनमोहक संसार।
यादें गहरी
साँसें बेहाल।

मुस्कान झूठी
उधार प्राण।

बातें कम
रातें जंजाल।

मैं झूठा
तू झूठी।

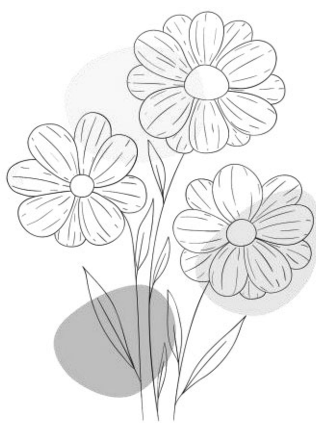

वही काम
सब बेकार।

मैं चालू
तू चालाक।

प्रेम हूँ मैं

जाने दो कटी पतंग को,
दूसरी छत ढूंढ़ने दो।
प्रेम में व्याकुल पड़ा हूँ,
मुझे और त्रस्त होने दो।

समेटी हुई सारी सफलताएँ,
मेरे मस्तिष्क चढ़ने दो।
शिखर पे चढ़कर,
मुझे जीत की हुंकार भरने दो।

दास नहीं
यहाँ का राजा हूँ,
यह बात होने दो।
चैन से मुझको,
ऊँचे से ऊँचा उड़ने दो।

जो चाहूँ,
वो सब है मेरा
ऐसा भ्रम होने दो।
यह पर्वत क्षणभंगुर है,
ऐसा मेरा प्रताप होने दो।

मुझे सब जीतने दो,
मुझे सब जीतने दो।
कटी पतंग की तरह
बेपरवाह होने दो।

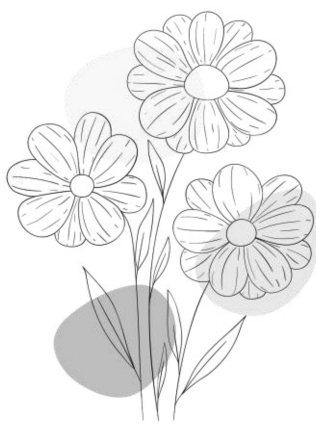

प्रेम में पड़ा हूँ
मुझे प्रेम से जीने दो।
मुझे सब जीतने दो,
मुझे सब मेरा लेने दो।

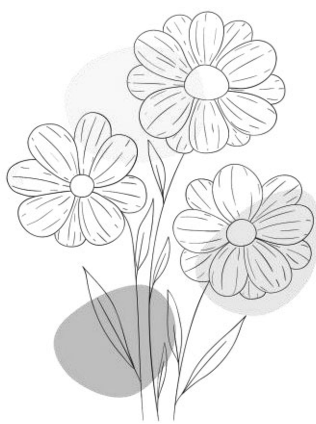

आराम करता

ठंड की धूप में
खटिया पे बैठा पुरुष
अपने आख़िरी दिनों में सोचता है,
कि समय जवानी का होता तो
और ज़ोर से जीता,
कि समय जवानी का होता तो
और बेपरवाह जीता,
कि समय जवानी का होता तो
प्रेम में और जीता।

ठंड की धूप में
खटिया पे बैठा पुरुष
अपने आख़िरी दिनों में सोचता है,
फिर ठहरता है,
गर्मी को महसूस करता है,
आस-पास की शांति को जीता है,
थोड़ा और आराम फरमाता है,

खुद से एक बार और पूछता है,
कि समय जवानी का होता तो
मैं और क्या-क्या करता?

कितना काफ़ी है?

एक जन्म
काफ़ी है क्या?

अधूरी रह गई जो कहानी,
काफ़ी है क्या?

बीच मझधार जो चला गया,
उसको याद करके जीवन निकाल देना,
काफ़ी है क्या?

थोड़ी इच्छाएँ जो रह गईं,
तो अब उनकी पूर्ति में जल-जलाना,
काफ़ी है क्या?

इस जन्म में दोबारा मिलन की कहानी
नहीं होगी क्या?

पूछता हूँ मैं बार-बार,
शंख बजाने वाले,

मेरा जो अज़ीज़ दूर हो गया,
उससे दोबारा मुलाक़ात की मेरी आस,
काफ़ी है क्या?

ये कैसा जन्म-मरण रचा तूने,
तू भी हमें बनाकर भूल गया क्या?

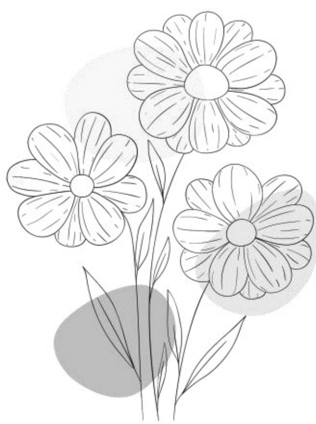

अगर इस जन्म में तुझे पूजू,
तो अगला जन्म नहीं होगा…
इतना काफ़ी है क्या?

मैं घुटनों पर बैठ,
आँसू पिए,
हाथ जोड़े पूछता हूँ मेरे सदाशिव,

“एक जन्म काफ़ी है क्या?
अधूरी रह गई जो कहानी,
काफ़ी है क्या?”

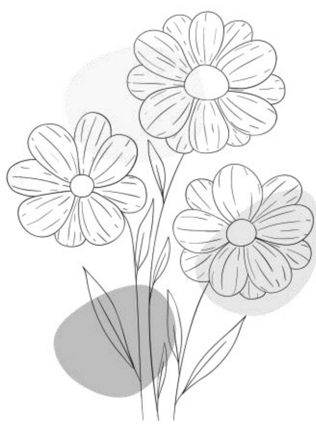

मैं बैठा रहा

आज की खोज में,
कल की चिंता से मुक्त,
बीते हुए कल से आगे,
समय की चिंता से दूर।
अपनी मस्ती में चूर,
अपने सुख में लिप्त,
शून्य की गहराई में,
मैं बैठा रहा
हँसती तन्हाई में।

शरीर विराम में,
गिरती हुई बारिश की आवाज़ में,
छल-छल भीगता मैं,
छप-छप करते नयन।
कंपकंपाती हवा का शोर,
ज़मीन से बहते आँसू,
शून्य की गहराई में,
मैं बैठा रहा
हँसती तन्हाई में।

झर-झर नदियाँ बही,
पग-पग चिड़िया छिपी।
घर भागते नन्हे पाँव,
बारिश में बैठा मैं, नरेश।
आँखों से देखा हर क्लेश।
भूख से लड़कर लगा रहा,

शून्य की गहराई में,
मैं बैठा रहा
हँसती तन्हाई में।

सोना नहीं चाहता,
अनाज नहीं खाता।
मदिरा से कोई लगाव नहीं,
मिल जाए तो कोई बैर नहीं।
बारिश को थमता देखा,
सूरज को निकलते देखा।
शून्य की गहराई में,
मैं बैठा रहा
हँसती तन्हाई में।

दिन ढल गया,
तस से मस मैं नहीं हुआ।
सन्नाटे से लिपटे,
खुद को जकड़े,
चढ़ती रात को देखा,
तारों को आते देखा।
शून्य की गहराई में,
मैं बैठा रहा
हँसती तन्हाई में।

आदमी आदमखोर

सृष्टि के वन में
कैद हैं कितने दोष,
दो पैरों पर चलने वाले
सब बन गए आदमखोर।

माया में मतिभ्रष्ट,
जानवर से बद्तर बसाएं,
त्याग-धर्म छोड़,
सब मत्तता में सुर चढ़ाएं।

भूगोल भूल,
इंच-इंच हिस्से पे स्वामित्व जताएं,
वन-वन से दूर ऊँच
आशियाना बनाएं।

काम में लीन,
बुद्धि हिराए-हिराए,
क्रोध पे चढ़,
आदमखोर दहाड़े,
सब पर हुकुम जताए।

फिर स्वाद के लालच में
किसी ममता का जग उजाड़ें,
नाश धरे इस मानुस को,
शरीर को दीमक चाटे।

इस आदमखोर को
वन के जीव,
"आदमी"
पुकारे।

क्यूँ नहीं सुनता

यह आस-पास की भीड़,
यह मगजमारी का शहर,
यह कामयाबी की काल्पनिक सीढ़ियाँ,
सब भ्रमजाल हैं,
सभी भ्रमजाल हैं।

समय रहते निकल जा यहाँ से
वरना बेमतलब की यात्रा में खो जाएगा।

तू अपने साथ लाई हुई
गाँव की सादगी भूल जाएगा।
चल, अब सोच चला
मूर्खता से खुद को बचा।
अरे तू सुनता क्यों नहीं, श्रापी?
बड़ा बदतमीज़ है रे तू,
इतने अत्याचार के बाद भी
यह शहर नहीं छोड़ता।

सच बता,
जिम्मेदारियों का बोझ
ज़्यादा है क्या?
घर पे अनाज की कमी,
ज़्यादा है क्या?

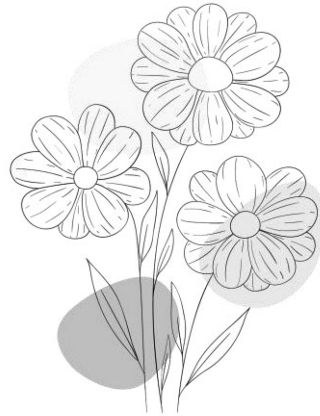

तू भी ठीक, मैं भी ठीक

मुझे नहीं बनना तुम्हारे जैसा
मैं लाचार हाड़-मांस निशित हूँ,
किसी और के दिखावे के स्वरूप से उचित हूँ।
रग-रग में तुम्हारे क्रोध समाया
जी-हुज़ूरी के तुम ही
सबसे बड़े कहवैया।

तुम क्या ठग लोगे मेरे नियति-नक्ष में,
मैं उच्च से उच्च वैराग्य का घुमइया।
लपट लाल लहू मेरे भीतर सुनी बतियाँ,
तुम पानी के ख़ून,
बोलो ना अपनी कथनियां।

पश्चिम को मैं दक्षिण बोलूं
ऐसा अहंकार मेरा,
तुम पश्चिम को कहने से डरो
ये तुम्हारा पेशेवर रवैया।
सुधि करो बुद्धि,
भय को नीचे पटको,
मेरी तरह भूतों से लड़,
उनसे जीतो।

मैं गलत
तो गलत ही सही,
मेरी रचना यही,
पाखंड से दूर,
सत्य की कोख में जिया बनकर लहू।

तू क्या सोचेगा मूर्ख?
तू मेरे तिनके जितना भी नहीं।

मैं अहंकारी रावण ही सही
पर सोने की लंका है।
तू सत्यवान ही सही
पर पल-पल मरता है।

कर्म का बनाया तू भी ठीक,
कर्म का बनाया मैं भी ठीक।

मैं अगर अहंकारी रावण
तो भी ठीक,
तू सच्चाई की मूर्त श्री राम
तो भी ठीक।

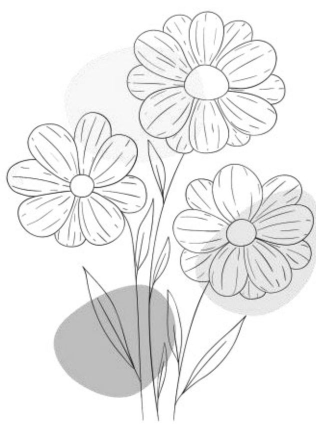

स्वीकार किया

हाथ फैलाए,
मुझे सब स्वीकार।
हार दे,
तो भी स्वीकार
प्रेम ले जा,
तो भी स्वीकार।

पुष्टि कर दे मेरे प्रश्नों की,
तो मुझे सब स्वीकार।

न माँगता हिसाब
न देता जवाब
तुझे जो ठीक लगे,
वो सब मुझे स्वीकार।

प्रभु,
मुझे तेरा दिया हुआ
ग़म भी स्वीकार।
प्रभु,
मुझे तेरा दिया हुआ
परिश्रम भी स्वीकार।

मैं अब कहता हूँ,
तेरे आगे झुकाए सिर,
मुझे तेरा दिया सब स्वीकार।

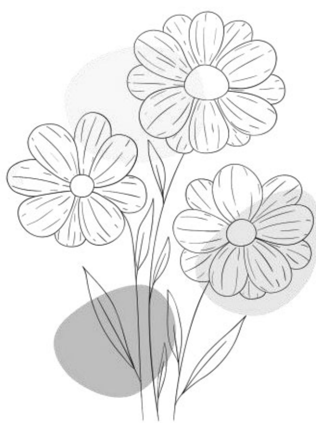

जेब में पड़ा ख़त

मैं आज भी ख़त लिखता हूँ
पुराने पन्नों पे तड़प के स्याही से
तुम्हारा नाम लिखता हूँ।

गुलाब की पंखुड़ियों को आज भी,
पन्नों में क़ैद रखता हूँ।

मैं कानों से अपने बचाए हुए
हिस्से के प्रेम को दूर रखता हूँ।

तुम्हारा नाम लिफ़ाफ़े पे लिख,
ख़ुद डाकिया बन तुम्हारे पास आता हूँ।

तुम्हें देख, धड़क खड़ा रह जाता हूँ,
जेब में ख़त लिए दबे पाँव लौट जाता हूँ।

जी करता है कह दूँ
जो ख़त में है ज़ुबानी।

फिर लगता है,
कहीं तुम्हें लगे न ये, बेकार की आपबीती।

ख़ैर,
आज भी ख़त संभाल
अपनी सफ़ेद बुशर्ट की ऊपर वाली जेब में रखा है।

फिर हुई मुलाक़ात तो शायद बातें होंगी,
वरना, काश बोल देता
कि ख़्वाहिशें होंगी।

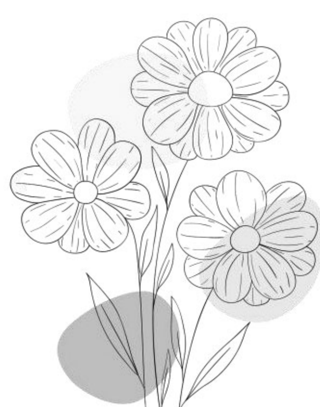

नया तू

कश्ती में बैठ
गंगा नदी घूम,
ले डुबकी,
और
पिछली तकलीफ़ें भूल।

नई दिशा को जा
मिलेगा तुझको सुकून,
मतलब से दूर,
बन जा ख़ुद यमदूत।

पाप ले जा नरक
अच्छाई ले जा स्वर्ग,
कर सही हिसाब,
और लिख नया युग।

ऊँचा उड़ और
ज़मीन को भूल,
चलते चल,
हँस,
ग़म पे डाल धूल।

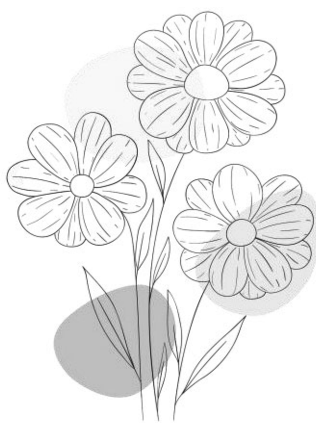

अपना ख्याल रख

सुनी-सुनी बातें,
उन बातों को नकारा।

नई-नई ख़बर मिलती रही,
मैं कितना मसरूफ़ हूँ
पल-पल इसकी ख़बर छपती रही।

सबके हिस्से की सब बातें,
मेरे हिस्से की सिर्फ़ मौन रातें।

कौन हाँ,
जी,
नहीं,
ये,
वो,
में जवाब दे,
मैं मस्त मलंग जिऊँ अपनी रातें।

कठोर दो वाणी,
या प्रेम छलकाओ,
मैं इन सबसे वंचित,
चंचलता सिर्फ़ लिए जाऊँ।

तुम कोसो मुझे जी भर,
मैं तनिक नहीं घबराऊँ।

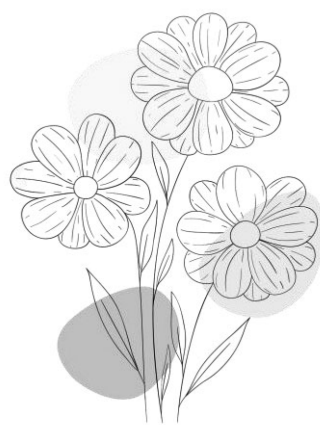

अंदर के टूटे तुम
तुम्हारी भी कुछ मजबूरी होगी।
गाली देने से मन हल्का होता है,
तो इसमें भी मेरी ही भलाई होगी।

तू जी से जीए
मन से बढ़े,
कोस-कोस मुझे
तू बस खुशी से खिले।

मेरा क्या है?
दिन की धूप,
रात की बेचैनी,
पर तू मत रुकना
जब तक अंदर की चोट न भरे।

तू पल-पल मुझे कोसना,
तू बस अपना ख्याल रखना।

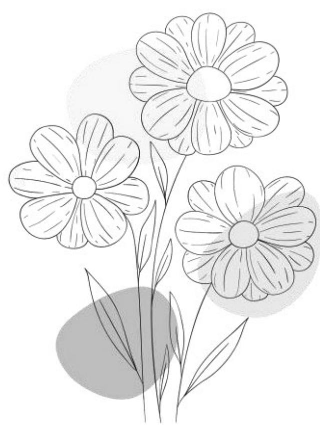

परछाइयाँ

अति हो गई अब तो,
महीने गुज़र गए
वो लौट के आया नहीं,
इतने दिन दूर वो कभी रहा नहीं।

कुछ बात हो गई क्या?
मेरी कोई बात
ख़राब लग गई क्या?
कुछ तो भयानक हुआ है इस बार,
वो इस तरह बिना बताए जाता नहीं।

अरे,

ओ मेरी परछाई,
कहाँ गई तू?
मुझसे नाराज़ है क्या?
मेरी रूह से कोई खटपट है क्या?

तू आजा,
मैं इंतज़ार में हूँ,
घर जाने की फ़िराक़ में हूँ।

वहाँ लड़का मेरा परेशान है
कई दिनों से बेहाल है।
तू चलेगी मेरे साथ
तो उससे मिल आऊँगा।
उसके साथ खेल, सुला आऊँगा।
चल अब विलंब मत कर,
एक झलक की बात है,
सुन,
इसमें ऐतराज़ जताने वाली
की क्या बात है?

चल अब आजा परछाई
मुझे मेरे घर ले चल,
मुझे मेरे परिवार के पास ले चल।

कब आ रहे हो फिर?

गुलदस्तों की महक
मेरे घर में कभी रहा करती थी।
मेरे आँगन में खुशियों की लहर उठा करती थी।
चाँद भी दर्पण लिए मिलने आता था,
इस घर में सबकी हाज़िरी लगती थी।

एक तेरे ही होने से तो घर रंगीन था,
तेरे ही होने से तो ये मकान "घर" था।
तू मुद्दतों बाद आ अपने घर,
और सब वापस लेते आ।
अभी कितना कुछ देखना बाकी था,
इस घर में तेरा होना ज़रूरी था।

तू लौट वापस,
कुछ रिश्वत देकर ही आजा।
तेरा घर तुझे रोज़ बुलाता है,
तू बस अपने घर आजा।

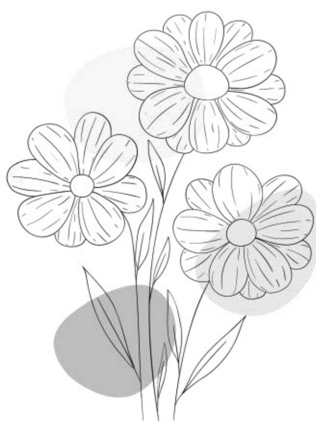

बेनाम

मैं अब सबको अनजाना लगता हूँ,
शिकायतें हैं
कि मैं पहले जैसा
नहीं हँसता हूँ।

बात ये भी ग़लत नहीं है,
पर उनको कौन समझाए,
मैं अब ख़ुद से
जुदा-जुदा रहता हूँ।

बहुत कुछ जाने दिया है अपना,
बहुत कुछ जला के आया हूँ अपना।

परसों तक मैं भी चमकता था,
ये कल की बात है
निराशा वाली,
वरना मैं यूँ ही
मायूस नहीं रहता था।

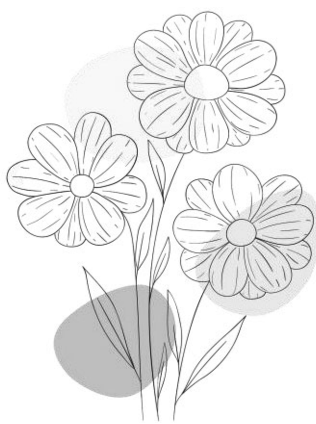

तुम सब हो मेरे

नवजात शिशु को लिए गोद
बना दिया तुमने उसका जीवन अनमोल।

पालन-पोषण कर उसे लायक बनाया,
जीने का सही मतलब सिखाया।

कंधे पर हाथ रख उसे आशीर्वाद दिया,
जब वो बढ़ा आगे, तुमने मूंछों को ताव दिया।

उम्र बढ़ी उसकी, तो तुम उसे देवता दिखाई दिए।
इसके पहले वो जीवन तुम्हारे चरणों में रखता,

तुम बिना कुछ लिए,
सिर्फ़ दान दिए चल दिए।

तुम हो महान, तुम हो भगवान,
तुम हो महान, तुम हो भगवान।

तुम हो दानी, तुम हो वरदानी,
तुम हो दानी, तुम हो वरदानी।

तुम ही हो मेरी पूर्ण कहानी,
तुम ही हो मेरी पूर्ण कहानी।

ठीक-ठाक रह लेता हूँ

उदासी का शौक़ रखता हूँ।
दिल में क़ैद एक नज़्म रखता हूँ,
रात के सन्नाटे में चलता चला जाता हूँ,
मैं भी मिले हर दर्द का लेखा-जोखा रखता हूँ।
आँखों में क़ैद सारी बातें रखता हूँ,
मैं ख़ुद को ख़ुद से बचा कर रखता हूँ,
अपने आशियाने को परायों से महफ़ूज़ रखता हूँ।

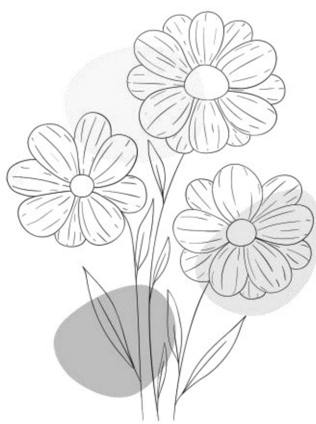

आराम करो

अपनी कुर्सी पर बैठ,
मैं देखता हूँ तुम्हें
ख़ामोश रातों में,
तुम अच्छे लगते हो सोते हुए।

सोचता हूँ तुम्हें उठाकर पूछूं,
कैसे सो लेते हो बिना हमें देखे-सोचे?
फिर एहसास आता है,
तुम अच्छे लगते हो सोते हुए।

रात पर अंधेरा चढ़ता गया,
भीगी-भीगी आँखों से मैं
तुम पर नज़र गड़ाए बैठा रहा,
क्योंकि,
तुम अच्छे लगते हो सोते हुए।

घड़ी की सुई तुम्हारी नींद न खराब कर दे,
इसलिए शोर वाली घड़ी मैंने अपने नाम कर ली।
मैं तुम्हें 'उफ़्फ़' की आहट से दूर रखना चाहता हूँ।
क्योंकि,
फिर से मत पूछो,
पता तो है तुम्हें,
तुम अच्छे लगते हो सोते हुए।

अब कभी उठना तो बताना,
मैं सोने चला जाऊंगा।

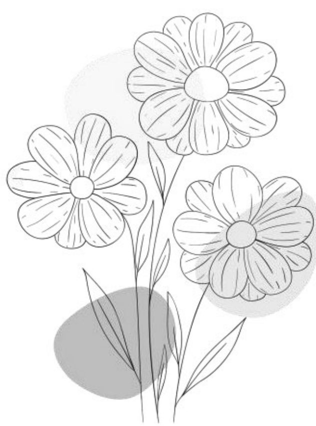

आज़ादी से आज़ाद

दौलत, शोहरत, मुकम्मल
सब कमाने निकलूंगा
आज अपने घर से,
ताकि कल लौटूं
तो आज़ादी से देर तक सो सकूं।

मुमकिन है,
मैं नया घर बना सकता हूँ,
पर पुरानेपन की जकड़ मुझ पर अब भी है,
और यही मेरी आज़ादी को
आज़ाद बनाती है।

लोग तो दूर हैं भूलने को
मुझे आज भी पुराने लिबाज़ों से लगाव है,
उन्हें चिरता देख,
मैं रो उठता हूँ।

कमज़ोर नहीं हूँ
यह भी जुड़ाव है मेरा,
यही मेरी आज़ादी को,
आज़ाद बनाती है।

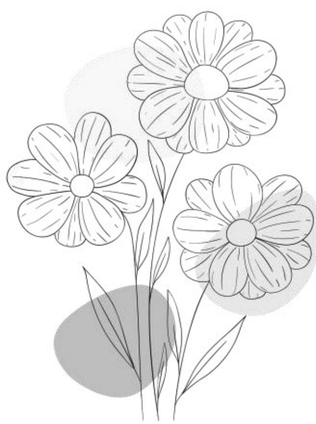

ऐसी कई क्रियाएँ हैं,
जो मेरी आज़ादी को आज़ाद बनाती हैं,
जैसे,
तुम्हारा मुझ पर सब कुछ छोड़कर चले जाना,
और मेरा अपना सब कुछ छोड़कर,
तुम्हारा सब कुछ अपना लेना।

मेरी आज़ादी,
तुम्हारे आज़ाद होने के बाद फिर से शुरू होती है।

तुम मुझे ऐसे ही आज़ादी में क़ैद रखना,
मैं ऐसे ही तुम्हारे सहारे आज़ाद रहना चाहता हूँ,
उम्र भर।

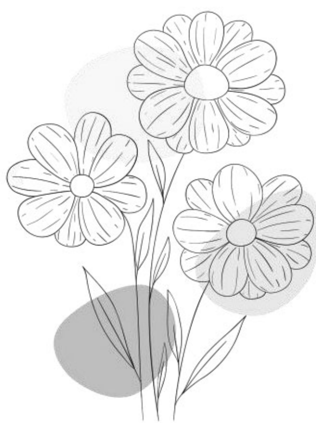

नवंबर

उम्मीदों का आँचल ओढ़,
मैं निकल जाता हूँ ठंड से लड़ने।
फरवरी-मार्च का तो ठीक है,
पर ये नवंबर मात दे जाती है,
अख़िरी के महीने में मुझे,
अकेला कर जाती है।

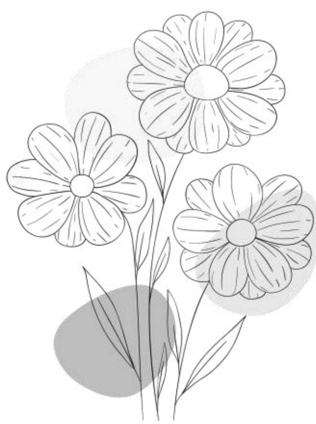

अर्ज़ी पत्र

मैं कभी तन छोड़ूँ
तो ठाट से जी उठूं।
इस लोक से दूर
उसे जा मिलूं।

सागर में बहूं
गंगा अपना लूं।
परलोक पहुँच
नए कपड़े सिलवा लूं।

वहाँ भी चले मेरा ठाट,
ऐसी पकड़ बना लूं।
कर्म से छूटूं
लोक पर शान से घूमूं,
नया कर्म-खाता खुलवा लूं।

क़िस्मत की स्याही से
दोबारा अपने घर में,
जन्म की कुंडली,
संपन्न करवा लूं।

फिर तैयारी त्योहार की कर लूं,
घर जाना है अब
थोड़ा सज-संवर लूं।
थोड़ा और खुद को,
घर जाने के काबिल कर लूं।

बड़ी बात

बड़ी घटना तो यह है,
कि यह पुरुष अब कुछ बोलता नहीं है।
यह ऐसे रोग से पीड़ित है,
जिसका जहाँ में कोई इलाज नहीं है।

अरे ज़िंदा लोग,
पूछो इससे,
कौन सी बड़ी बात हो गई है,
जो यह खुद से एकांत में है?

समझ की शरारत है,
या इसके तड़पते मन की छेड़छाड़ है?

रंगों-प्यार गीत

रंगिया चढ़े चाँद
मन माँगे गुलाल,
मोहे रंग दे
पिया तू प्यार,
मैं हो जाऊँ
शर्म से लाल।
ओ पिया
रंग दे मुझको प्यार,
मैं हो जाऊँ
शर्म से लाल।

गुलाल छुए तन
और नैना जाए भीग
तेरे स्मरण में
बनी मैं होली गीत।
ओ पिया,
रंग दे मुझको प्यार
मैं हो जाऊँ
शर्म से लाल।

झूम मेरे संग
जी ले साथ ऋतुएँ
कल की छोड़
अभी खा ले कसमें।
ओ पिया,
रंग दे मुझको प्यार

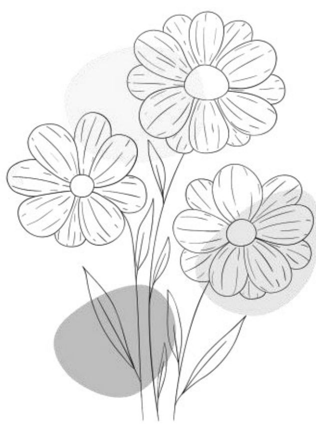

मैं हो जाऊँ
शर्म से लाल।

हाथ थाम साथी
ले जा नदीया पार
सुख ले जा तू
दुःख दे दे उधार।
ओ पिया,
रंग दे मुझको प्यार
मैं हो जाऊँ
शर्म से लाल।

छेड़ो न अब
अंतिम पंक्तियाँ आईं,
तुम चूम लो सिर
मैं घर पे बता के आई।
ओ पिया,
रंग दे मुझको प्यार
मैं हो जाऊँ
शर्म से लाल।

इतवार-सोमवार खिचपिच!

मैं इतवार के दिन
निकला हूँ घर से,
सारे हफ़्ते का काम करके।

दोबारा आने में समय लगेगा,
नए बचे काम को करने में सब्र लगेगा।
सोमवार को चढ़ेगा नया दिन,
तो शायद लौटूँगा।

दफ़्तर में दोबारा
छुट्टी की अर्ज़ी डाल दी है,
मुकम्मल होने में समय तो लगेगा।

हाज़िरी देके निकल पाया तो भागा आऊँगा,
मैं इतवार को किए वादे,
पूरा करने आऊँगा।

बेहतर बनना

पत्तों से पूछा
टूट के गिरते हो,
तो मुरझाते क्यों हो?

इधर देखो,
जब-जब घर छोड़कर निकलता हूँ,
पहले से बेहतर बनकर लौटता हूँ।

हालांकि यह अलग बात है,
पूरा बचपना लिए
वापस शहर नहीं आता हूँ।

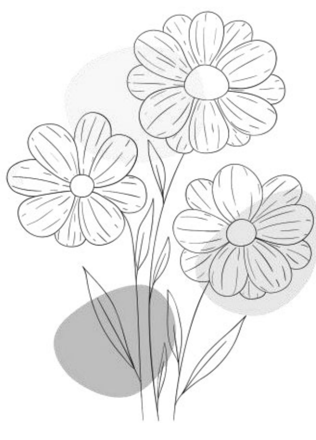

अंदर का कर्म

पापी के कितने पाप,
जो खुल जाए नरक द्वार।
जीवन में कितने उतार,
कि फिर खुल जाए भाग्य।

छल के कितने रूप,
जिसके बाद,
दिखे सत्य स्वरूप।
झूठ की कितनी धार,
कि फिर कट जाए ज़ुबान।

मोह की तड़प की क्या परिभाषा,
जो समझ जाए मेरी अभिलाषा।
जलते तन की क्या पीड़ा,
क्या कोई समझ पाए,
देखने वाला?

अंदर ही अंदर सब कर्म पलता,
तेरे सिवा यह कोई नहीं जानता।

अंदर ही अंदर सब कर्म पलता,
तेरे सिवा यह कोई नहीं जानता।

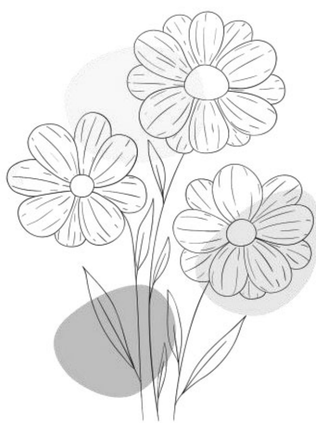

बीते नवंबर की कहानी

सुरमई शाम
आस-पास खिलते गुलाब,
खेतों के बीचो-बीच
दो प्रेमी
कुर्सी पर फरमाते आराम।
जवानी का लिए सुरूर,
शरीर से तंग
कभी कमर दर्द,
तो कभी आपस की अनबन।

सोना जैसा मन
शांति जैसा रंग,
दोनों जीवन का
सुख-दुःख सहे संग।

लड़के का फ़ोन आया –
"घर आ रहा हूँ,
रहने कुछ शरण।"

आगे…
चेहरे पर रौनक खिली,
लाडला घर आएगा
इस बात की खुशी में
चहल-पहल बढ़ी।
कभी ये पकाना है,
कभी वो लाना है।

चार दिन के लिए आएगा,
फिर चौदहवीं का चाँद हो जाएगा।

तीनों आपस में गदगद
फूलों के बीच रहते मगन।
दिन भर की चंचलता में
बीत जाता हर पल।
समय की रफ़्तार ने तेजी पकड़ी,
दूध-मलाई, छब्बीस पकवान खा,
लड़के ने घर से विदाई ली।

उस वक्त का हाल
माँ को करता बेहाल।
दो पहियों पे बैठा
स्टेशन ले जाना है,
आज लड़का जाएगा,
तभी तो कल फिर आएगा।

बाप भीतर से रोकना चाहे,
पर था कभी वो भी बेटा
इस बात को समझ
ख़ुद को रोक पाए।
बढ़ती उम्र के बेटे को
जिम्मेदारी दे दो,
कल सुधर जाए
इसलिए उसे आज दूर कर दो।

और हाँ,
जाते-जाते उसे
'कल्याण हो'
का आशीर्वाद भी दे दो।

गेट पर खड़ी
सोचे –
"ज़माना ख़राब है,
सारा समाज चील है
मेरे बेटे को नोंचने के लिए तैयार हैं।"
माँ का मन
कुछ भी सोच सकता है,
रोते-रोते कहीं भी
दिमाग़ चला जाता है।

ख़ैर,
पिता अब लौट आए,
बेटे को स्टेशन छोड़ आए।
कुछ दिन घर सन्नाटा देखेगा,
फिर सब पहले जैसा हो जाएगा,
उम्मीद तो है ही,
बेटा कल-परसों फिर लौटेगा।

आज दिन कुछ भारी-सा लग रहा है,
थोड़ा उदास-सा लग रहा है।

घंटी बजी,
लड़के ने फ़ोन उठाया –
आवाज़ आई:
"आ जाओ, वो चले गए..."
"कैसे चले गए?
पाँच दिन पहले
10.11.24 को तो मुझे छोड़ के आए थे,
ख़ुद कहाँ चले गए?"

आवाज़ फिर आई –
"तुम आ जाओ,
जितनी जल्दी हो सके,
आ जाओ..."

भाग खड़ा हुआ लड़का
आँसू भी नहीं आए।
बात है ये कुछ टेढ़ी,
जो वो समझ न पाए।

कुछ समय लगा,
झरने के आगे
छल-छल आँसू बहने लगे,
घुटनों पर बैठ
फूट-फूट वो रोने लगा
अपने भगवान को कोसने लगा।

देव दीपावली का दिन था,
जब वो मणिकर्णिका पहुँचा।
देख उन्हें चुपचाप लेटा,
उनसे बोल पड़ा –
"ये शर्ट ठीक नहीं लग रही,
चलो ना दूसरा दिला दो।"
इस बार –
"चलो ले लो"
वाला जवाब नहीं आया।
वो समझ गया
कि सब कुछ छिन गया उसका।
ग़ैरों के सामने वो रोया नहीं,
अग्नि दे के
जिम्मेवारी समझ ली उसने,
घर उठा लिए कंधों पर उसने।

अस्थियाँ बहा
जब लौटा वो घर,
माँ के सीने से चिपका रहा
घंटों भर।

धीरे-धीरे दिन बीते,
फिर बीते महीने,
दोनों खालीपन के साथ
जीना सीख गए,
एक-दूसरे के सहारे
रहना सीख गए।

दोनों याद खूब करते हैं,
पर एक-दूसरे को बताते नहीं।
दोनों एक-दूसरे की आँखों में आँसू
देख पाते नहीं।

इतनी-सी थी मिल के बिछड़ने की कहानी,
जो जिसका भी है, जैसा भी है,
बस लिखे समय के लिए है।
इसमें क्या गिले-शिकवे रखना।
ले लो तस्वीरें,
कर लो बातें।

ये कहानी हर घर आती है,
ज़िंदगी भर का खालीपन
दे जाती है।

जियो आज, अभी,
खूब जियो।
जब तक अज्ञात हो
आख़िरी पड़ाव से,
शोर से जियो,
और सबको ज़िंदा रखने की,
कोशिश करो।

कर्ज़ के लोग

एक बार कर्ज़ उतर जाए,
फिर इस बेहूदे समाज को
फुर्सत में बैठकर कोसते हैं।

जो रह गया है इसमें खो,
उसे निकालते हैं।

कोई क्या ही कहेगा
इससे लोगों को,
लोगों से बचाते हैं।

पर पहले,
हाँ भाई पहले,
अपना कर्ज़ उतारते हैं,
घर पे सब मुकम्मल करवाते हैं।

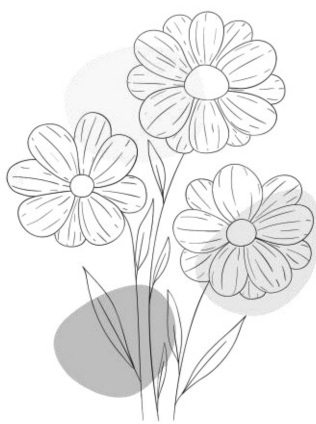

जाल से परे

बाँधो न ऐसे वचन
गठरी का बोझ भारी।
घूमर-घूमर
वचनबद्ध का श्राप,
ले गई मेरी नींदें सारी।

भीड़ मे फँसे
सोच हो रही मेरी भारी,
कैसे निकलेगा
इस नए चक्रव्यूह से,
या रह जाएगा बनके दासी।

होश, सब्र, सब शत्रु,
गोपाल तू ही एक सारथी।
दिखा दिशा
दे मुझको सद्बुद्धि,
निकलूँ जाल से,
बनाऊँ हसीन ज़िंदगानी।

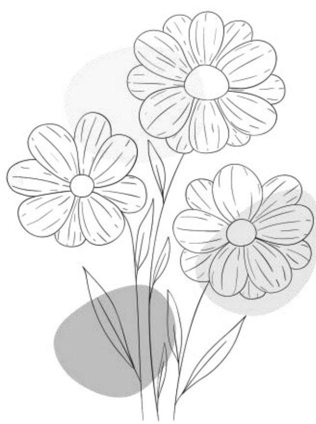

चाह पे काबू

मन चाहे जो चाहे,
फकीरी में सब कुछ चाहे,
अमीरी में कुछ न चाहे।

घर से दूरी चाहे,
और साथ सुकून भी चाहे।

बारिश से बचना चाहे,
इंद्रधनुष के रंग चाहे।

सुंदर स्त्री चाहे,
उसके बाद भी सबको चाहे।

दूसरों के तमाशे में सुख चाहे,
खुद के क्लेश में एकांत चाहे।

रहम अपने कर्मों पर चाहे,
दूसरों को कष्ट देकर आराम चाहे।

भक्ति में लेन-देन चाहे,
उपवास रख बदले में कुछ चाहे।

यह मन चाहे जो चाहे,
यह दूसरों का सब कुछ चाहे।

अंतिम चाहत

मुझे विरह की तड़प चाहिए,
मैं महान बना रहूँ,
ऐसा अभिमान चाहिए।

मैं खोने वाला हूँ अपनों को,
ऐसा झूठ चाहिए।
मैं हूँ उसका सदा,
ऐसा नसीब भी चाहिए।

मर्ज़ी तेरी ही चलती है,
पर कभी मेरी भी चले,
ऐसा वरदान चाहिए।

अंत में...

मैं हो जाऊँ हवा,
जो मिले नदी,
अग्नि,
आसमान से,
ऐसा अंतिम गमन चाहिए।

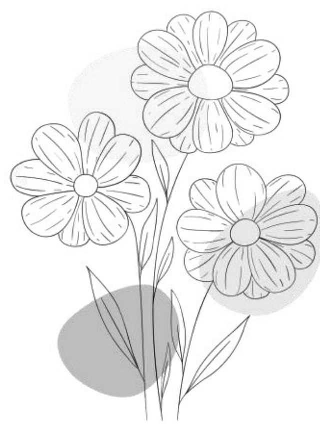

कैसे कर लेता है

कैसे कर लेता है
ये हँसने का दिखावा,
बहुत शातिर हो गया है तू,
दुनिया अब समझ चुका है न तू।

ये तू, ता, की बातें
अब तुझे परेशान नहीं करती, हैं न?
शहर जाकर,
'हम', 'आप', भूल गया है न तू?

भूल से भूल जा दिखावा,
अब आया है तो रो ले यार,
हम,
में,
हमारा,
थोड़ा अपनापन जता दे यार।
अब ऐसे हँसते-मुस्कुराते मत देख मुझे,
आईना हूँ,
सूरत-असलियत अपनी,
देख ले मेरे यार।

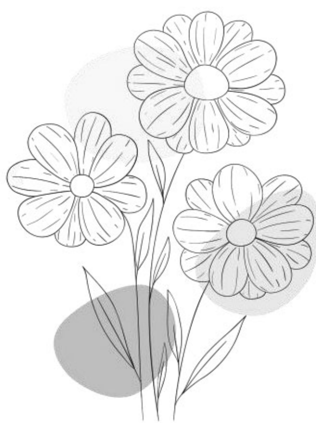

कैसे देखा होगा उन्होंने

सुंदर नीला आसमान
मेरी आँखों में
दिख रहा है प्यार।
तू भी देख इन्हें
लेके मेरी नज़रें उधार,
क्या पता,
तुझे भी हूबहू वही नीला
दिखे मेरा आसमान।

रोगी,
मैं मन का तेरे प्रेम में,
तू दवा,
मेरी इस प्रेम की तपन में।
चल कर ले तैयारी,
अब तेरी है बारी,
एक घर छोड़ आएगी
तभी तो दूसरा स्वर्ग बनाएगी।

मेरे कंगाल पड़े मकान में
तू लक्ष्मी बनकर आएगी,
दीवाली की रोशनी अपने संग लाएगी।
दहेज में माँगू मैं प्रेम तेरा,
हर दिन सुनहरा होगा सवेरा मेरा।

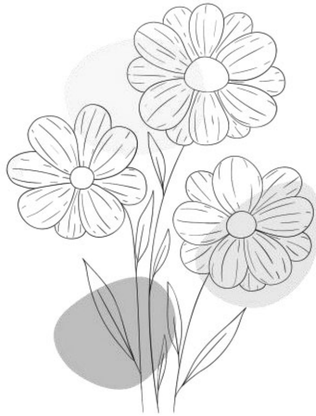

तेरे कदमों में धीरे-धीरे
रख दूँगा मंगल सारा,
तेरे हिस्से का ले लूँगा अंधेरा।
तू अर्थ मेरा
मैं होता हूँ तुझसे पूरा।

अब,
आसमान का नीला एक दिखा,
दोनों का मकान घर बना।
देवता आए,
ममता आई,
और जीवन बढ़ चला।

फ़िज़ूल की बात

हो जाए कुछ ख़ता
तू इस बार लड़े मेरे लिए
जैसे मैं लड़ा।

लेन-देन का मसला नहीं है,
पर तेरी तरफ़ से
क्या प्रयत्न वाली लगन है
कि नहीं है।

ज़रा देखे ये ज़माना
कौन किसका है।
मैं पूरा तेरा हूँ,
कि मेरा तू थोड़ा है।

कुछ-कुछ तो है हमारे बीच
वरना ऐसे,
सब होकर भी
सब फ़िज़ूल का थोड़ा,
थोड़ी है।

फिर वही...

अंधेरा क्या तोड़ेगा
मैख़ाना क्या बिगाड़ेगा,
ज़िद्द के आगे कौन सुनेगा
मुझको तेरे अलावा और कौन देखेगा।

ज़मीर से निकली आरज़ू कौन सुनाएगा,
बिगड़े दिल को कौन सुधारेगा,
अनुराग की तपस में कौन-कौन जलेगा,
यह भ्रम के शहर से कौन बचेगा।

तू रहेगा या मैं रहूंगा,
या यह प्रकृति का क्रोध सबको समेटेगा।
तू जलेगा, मैं भी जलूंगा,
नफ़रत के आक्रोश में हर इंसान कटेगा।
फिर जो बचेंगे, वो हिस्सा का बँटवारा करेंगे,
मिट्टी को भी बाँटकर अपना कहेंगे।

फिर लड़ेंगे, फिर मरेंगे,
फिर जिएंगे, फिर रोएंगे।

फिर वही चाल-चलन चलेंगे,
फिर वही चाल-चलन चलेंगे।

ज़रूरत का सुनो-समझो

सुनो
समझो
पूछो
कि क्या
हो तुम।

सुनो
समझो
पूछो
कि क्या
चाहिए तुम्हें।

सुनो
समझो
पूछो
कौन
चाहिए तुम्हें।

सुनो
समझो
पूछो,
क्या तुम भी
चाहिए उसे,
जितना
तुम
चाहते हो उसे।

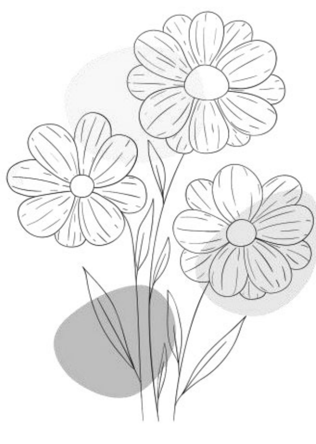

सुनो
समझो
पूछो,
क्यों चाहिए
उसे तुम,
ऐसे कुछ ख़ास
तो
नहीं
लगते हो तुम।

ओहो…
अब
बंद करो
सुनने-समझने
की बातें,
समय को
भी हाँकने दो,
एक-दूसरे
को मौका दो।

एक-दूसरे की
ज़रूरतें
पता तो
लगने दो।

फिर,
सुनते-समझते रहना,
एक-दूसरे को
मनाते रहना।

कभी
झगड़ते रहना,
कभी
स्नेह में रहना।

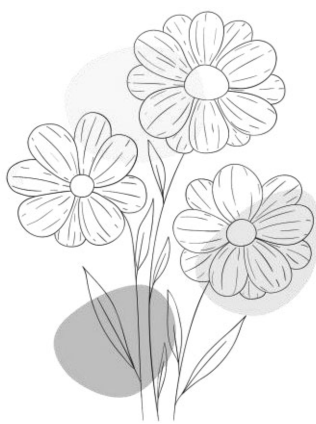

अपना ही कातिल

मैं ख़ुद को भी भूल जाया करता हूँ अक्सर,
यह मेरे जिम्मेदार होने का परिणाम है।
मैं ख़ुद को भी तकलीफ़ें नहीं बताता हूँ अपनी,
यह मेरे जवान होने का श्राप है।
मैं नहीं महसूस कर पाता चीज़ें आस-पास की,
यह मेरे सूखे अश्क का इम्तिहान है।

भाग्य स्वरूप,
मैं नहीं कर सकता शिकायतें अपने क़ातिलों की,
इसके पीछे मेरे भी कुछ,
अनकहे राज़ हैं।

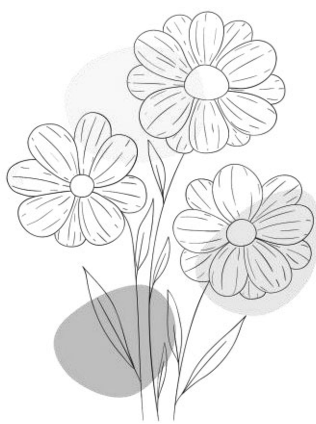

चप्पल

बहुत चला करते थे वो,
चलते-चलते
उनकी चप्पलें
घिस जाया करती थीं।

मैं पाठशाला में हुआ करता था तब,
मैं सोचता था
एक बार
मेरे जूते
थोड़े गंदे हों,
तो मैं उनके लिए
सबसे कीमती चप्पल लूंगा।

कृपा थी उनकी,
मैं घर लौटा
नई चप्पल लिए,
ऐसे जैसे
उनके किसी पुराने यारों ने
पहने न होंगे।

जैसे ही मिला मैं उनको
यह देने के लिए,
उन्होंने खड़ाऊँ
पहनने का सोच लिया,
और जीवन की
यात्रा से

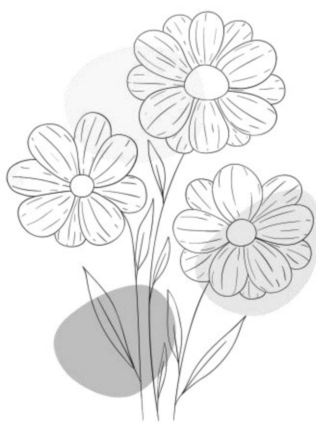

कोसों दूर
चले गए।

अब उनकी याद में
वो चप्पल
मैं पहनता हूँ।

और,
टपकते हुए मोती से
उन्हें साफ़ करता हूँ।

अब मैं कुछ
नहीं नया लेता,
उनकी पुरानी पड़ी
वस्तुओं को
पास रखता हूँ।

इस तरह मैं
उन्हें अपने लिए,
ज़िंदा रखता हूँ।

सौदागर

बिखर गए हैं होश
ना रहा वैसा जोश,
कुछ-कुछ होने लगा है
अब दम घुटने लगा है।

मनमर्ज़ियाँ गई हैं थम
चादर पर पड़ती थीं जो सिलवटें,
हो गई हैं कम।

पुराने कपड़े खिलसे पड़े रहते हैं
नए लिबास रोज़ चढ़ते हैं।

क्या रोज़-रोज़ वही भोर देखना
क्या रोज़-रोज़ वही उदासी भरी रातें जागना।

क्या-क्या का है मुझ पर दोष
ऐसे क्यों रहने लगा हूँ मैं रोज़?

ज़मीन की नींद,
महबूब से बात,
बिछड़े की याद,
फिर वही दिन
फिर वही रात।

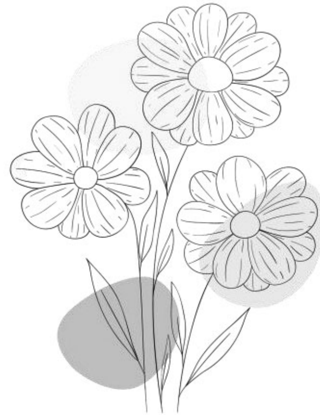

दृढ़ता की कमी है
ये माना है,
मगर,
ये सब तो सोची हुई बातें हैं,
असोच वाली बातें तो…

अगर सही बताऊँ,
मुझे ही,
कुछ-कुछ होने लगा है,
ख़ुद को देख ऐसे,
अब दम घुटने लगा है।

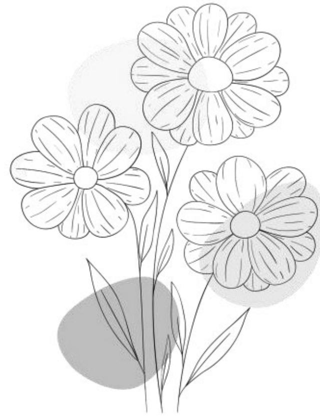

मोल-भाव

मेरे ज़्यादा लगाव के सौ आँसू,
मेरे कम लगाव के दो आँसू।

सब अपने हिस्से के आँसू लिए आते हैं,
कोई ज़्यादा, तो कोई कम याद में गिरा जाते हैं।

दूर के रिश्तों के दो आँसू,
करीब के रिश्तों के सौ आँसू।

यही गणित है दूरी का,
यही मोल-भाव है अपनों का।

जितना जुड़ाव, उतना मनमुटाव,
उतना प्रेम, उतनी ही पीड़ा।

सही मोल-भाव पर जीवन खिलता है,
इधर-उधर होने पर आँसुओं में बँट जाता है।

दो और सौ का खेल है,
इसी में सारा मोल-भाव लिखित है।

खरीदारी

महीना आरंभ हुआ,
नमक, शक्कर, राशन का पर्चा बना।
मुखिया ने स्वयं अनुमति दी
फिर प्रजा ने इच्छा की गुहार लगाई।
कुछ ललक और जुड़ी पर्चे में,
खुशी-खुशी सबकी पूर्ति हुई।

घर का बड़ा है कोई,
तब तक सबकी झोली में
सुख की भीख गिरी।
न वो जताता है,
न कहीं हिसाब लिखता है।
अपने लिए भी
थोड़ी मिश्री जोड़ देता है,
महंगे सुख वाले पर्चे में
अपनी थोड़ी कम वाली ललक,
लिख लेता है।

महीने का मनोरंजन है
हर घर की यह कहानी।
कोई पर्चा बड़ा लिखता है,
अपनों के लिए ज़्यादा,
ख़ुद के लिए कम रखता है।

महीना ख़त्म होते ही
यह मनोरंजन,
फिर आता है।

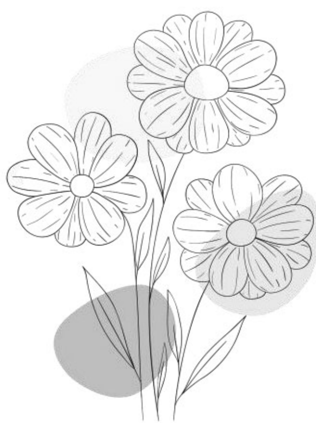

आपके लिए

माफ़ करिएगा
किताब ने अगर
आपको दुःख दिया,
मैं सिर्फ़ मोती की क़ीमत
बता रहा था।

मेरी नादानी समझिएगा
यह प्रियजन के लिए किताब है
इसे बालक बनकर पढ़िएगा।

शिकायत हो मुझसे भी अगर
तो घर का समझ के भूल जाइएगा,
थोड़ा अनपढ़ हूँ
नया-नया लिखना शुरू किया है,
भूल-चूक हुई यदि,
इस कारण,
तिरस्कार मत कीजिएगा।

आपके घर का मंगल बना रहे,
आपके ऊपर अपनों का हाथ रहे।

थोड़ा निज, थोड़ा उनका करिएगा,
खुद को उनके लिए संभाल के रखिएगा।

आख़िरी अलविदा

प्रणाम,
आज हमारे बीच की यात्रा अंत पे आ गई।
पर यह अंत नहीं है,
यह अनंत की ओर जाने का
जीवंत रूपी सार है।

मैं इस किताब के ज़रिए
रोज़ आपसे मिलूंगा,
कंधे पे आपका हाथ
महसूस करूंगा।

मेरे अक्षर समझने से लेकर,
मेरे कुशल भविष्य के
आप रचयिता हैं,
थे, और हमेशा रहेंगे।

गंगा में यह किताब मिलेगी आपको,
आप ले के पढ़ना इसे।

जब-जब बारिश होगी मेरे आँगन में,
मैं समझूंगा,
एक प्रसंग पूरा कर दिया है आपने।

रुकिए कुछ दिन,
मैं आऊंगा आपसे मिलने।
मौका दीजिएगा,
तो फिर बड़ा होऊंगा
गोद में आपके।

आख़िरी अलविदा है मेरा,
जब तक पवन बन नहीं आते मिलने,
मैं राह देखूंगा आपकी
मणिकर्णिका घाट पे,
जहाँ आख़िरी बार
मुलाकात हुई थी आपसे।

अंत: 15.11.2024

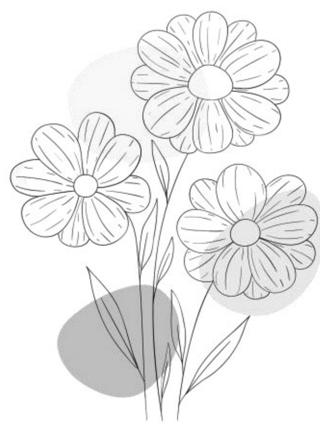

अंत तक साथ बने रहने के लिए आभार,
आप अपने नानापा को खुश रखिए।